गढ़मण्डल
की रानी
उमा शंकर

उमेश प्रकाशन

उमेश प्रकाशन

गढ़मण्डल की रानी

किशोरों के लिए उपन्यास

उमा शंकर

उमेश प्रकाशन

प्रकाशक • उमेश प्रकाशन,
५, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली-६

मुद्रक • राष्ट्रभाषा प्रिन्टर्स,
२७ शिवाश्रम, क्वीन्स रोड, दिल्ली

संस्करण • अक्टूबर, १९६१
(प्रथम संस्करण)

मूल्य • दो रुपये

दो शब्द

सुन्दर विचारों के द्वारा ही सुन्दर चरित्र का निर्माण होता है और सुन्दर विचारों को जन्म देने के लिए अच्छी पुस्तकों का पढ़ना आवश्यक है। विशेषकर किशोरों के लिए बहुत आवश्यक है। अगर उनका चरित्र उत्तम बन सका तो समाज और राष्ट्र की भी उन्नति हो सकेगी। यह बोझ तो उन्हीं के कन्धों पर पड़ने वाला है न।

यह उपन्यास इसी अभिप्राय से किशोरों के हेतु लिखा गया है। इसमें रोचकता है, आदर्श है और कर्तव्यों का ज्ञान कराने की विशेषता है। कहानी सच्ची है। घटनाएँ भी सब वास्तविक हैं। इतिहास के संग खिलवाड़ नहीं किया गया है। उसे सही रूप में रखा गया है।

आशा है यह पुस्तक नौ-निहालों के लिए लाभदायक सिद्ध होगी।

खास बाज़ार, उमा शंकर

कानपुर

१

घोड़े हवा की भाँति उड़ने लगे थे। राजकुमारी दुर्गावती और उनके पिता के घोड़े सबसे आगे थे। सोलह वर्षीय राजकुमारी की सुन्दरता उस समय देखते ही बनती थी। ईश्वर ने जैसा उनको रूप दिया था वैसा ही हृष्ट-पुष्ट और आकर्षक शरीर भी बनाया था। उन्होंने पीठ पर ढाल और कमर में तलवार बाँध रखी थी। दाहिने हाथ में बर्छा था। कीर्तिराय ने अपने घोड़े की लगाम तनिक और ढीली की। उसकी चाल बढ़ गई। राजकुमारी ने अपने पिता की ओर देखा और धीरे से अपने घोड़े के एड़ लगा दी। उनका घोड़ा हवा से भी तेज़ दौड़ने लगा। पिता पीछे छूट गये। वह मन ही मन प्रसन्न हुये और चिल्लाते हुये बोले, 'रोको दुर्गा! रोको ?'

राजकुमारी ने पीछे मुड़ कर देखा और घोड़े की चाल धीमी करने लगीं। कुछ दूर आगे जाकर घोड़ा रुक गया। कीर्तिराय ने समीप आकर पीठ थपथपाई और गद्गद् कंठ से बोले, 'शाबाश बेटे, शाबाश। मेरे...।'

राजकुमारी बीच में बोल पड़ीं, 'जी नहीं। अभी मैं शाबाशी नहीं लूँगी। घोड़ा दौड़ाना बहुत बहादुरी का काम नहीं है। अभी तो तेंदुए का शिकार करना है न। जब उसमें सफलता मिले तो शाबाशी दीजियेगा।' वह घोड़े से कूद कर नीचे आ गईं।

पिता चिल्लाये 'रोको दुर्गा, रोको ।' राजकुमारी ने पीछे मुड़कर देखा और घोड़े की चाल धीमी करने लगीं ।

कीर्तिराय भी अपने घोड़े से उतर पड़े। उनके पीछे लगभग पन्द्रह-बीस घुड़सवार सैनिक थे। वे भी अपने-अपने घोड़ों से उतरकर कायदे से खड़े हो गये।

राजकुमारी बोलीं, 'सब लोग साथ नहीं चलेंगे। मैं, पिता-जी और कोई दो।'

कीर्तिराय ने गर्दन हिलाकर राजकुमारी की बात का समर्थन किया और दो सैनिकों को चलने का संकेत करते हुये जंगल में घुस पड़े। आगे आगे राजकुमारी चल रही थीं। पिता का हृदय गर्व से फूल उठा था। वह सोचने लगे थे कि निश्चय ही उनकी पुत्री उनके नाम को अमर कर जायेगी। भगवान ने उसे सब गुण दे रखे हैं। योग्य सन्तानें पूर्व-जन्म की तपस्याओं के फलस्वरूप प्राप्त हुआ करती हैं।

दोपहर का सूरज सिर पर आ गया था। धूप की तेज़ी जंगल में भी अनुभव होने लगी थी। वातावरण में सन्नाटा खिंच आया था। मानो पशु-पक्षी भी विश्राम कर रहे थे। न कहीं गुर्राहट सुनाई पड़ रही थी, न फड़फड़ाहट। सब ओर शान्ति थी। राजकुमारी चलती चलती रुक गईं और बोली, 'पिताजी, उस दिन आप जिस सोता की चर्चा कर रहे थे वह किधर है ?'

कीर्तिराय—'क्यों ? यहाँ से वह कुछ दूर पड़ेगा।'

राजकुमारी—'तो क्या हुआ ? आज मैं बिना तेंदुए या चीते का अहेर किये लौटूँगी नहीं। बताईये किधर चलूँ ?'

कीर्तिराय ने टालने के विचार से कहा 'दूर है बेटे। उसके लिए रास्ता दूसरा है। इधर से जाने में देर हो जायगी। और किसी दिन के लिये रखो। आज···।'

राजकुमारी बीच में कह उठीं, 'ऊँहूँ। आज ही चलेंगे। मैं कितनी बहादुर और हथियार चलाने में निपुण हो गई हूँ उसकी भी आप परीक्षा लीजिए न। झूठी प्रशंसा से मेरा हित नहीं होगा। चलिये।'

विवश होकर पिता को आगे आगे चलना पड़ा। वह अपनी लाड़ली बेटी की बात को टाल नहीं सकते थे।

सोता की समीपता का जब अनुमान लगने लगा तो राजकुमारी झट से पिता के आगे हो गई और मन में नानाप्रकार की कल्पना करती हुई चलने लगीं। झाड़ियों की सघनता बढ़ गई थी, इसलिये सब लोग बड़े सतर्क और इधर-उधर देखते हुये चलने लगे थे। अचानक राजकुमारी ठिठकीं और पिता का हाथ पकड़ती हुई फुसफुसा कर बोलीं, 'सामने देखिये।'

'मैं देख रहा हूँ। तुम्हारा मतलब तेंदुए से है ?' कीर्तिराय ने पूछा।

राजकुमारी ने कहा, 'जी हाँ। और यह शिकार मेरा है। इसे मैं मारूँगी। आप मुझे किसी प्रकार की सहायता नहीं देंगे। इसे साफ साफ समझ लीजिये। नहीं दीजिएगा न ?'

पिता मुस्कराये, 'जब तुम कहती हो तो नहीं दूंगा।'

राजकुमारी—'बिल्कुल नहीं देना होगा, मैं उस तेंदुए को ललकार कर मारूँगी।' राजकुमारी इतना कह कर बड़े गर्व-सहित पुनः धीरे धीरे आगे बढ़ने लगीं।

कीर्तिराय भी मौन चलने लगे।

तेंदुआ मुँह झुकाये सोते में पानी पी रहा था। राजकुमारी ने कुछ आगे बढ़कर सबको रोक दिया और स्वयं एक झाड़ी की
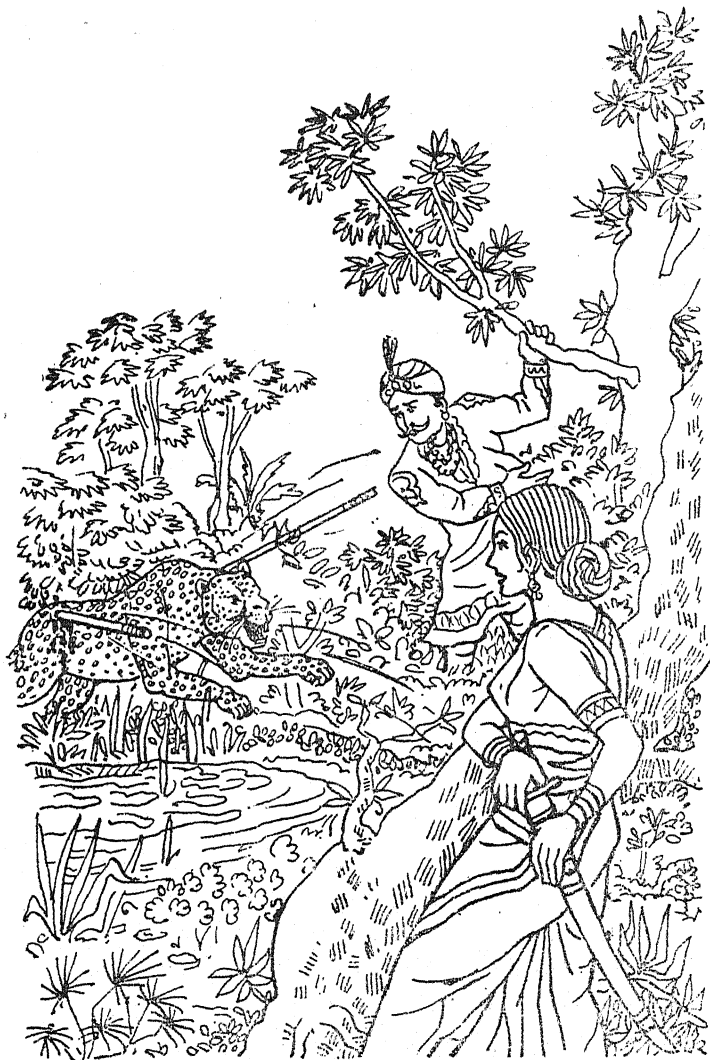
बाघ शायद एक ही वार में राजकुमारी का काम तमाम कर देता, परन्तु बीच ही में एक बर्छा उसकी गर्दन को बेंधता हुआ निकल गया।

ओट से होती हुई तेंदुए के तनिक समीप आईं। उन्होंने निशाना साधा और बर्छा फेंक कर मारा। संयोग की बात, निशाना कुछ चूक गया। बर्छा पेट में न लग कर पुट्ठे में धंस गया। बाघ तिलमिला उठा और भयंकर गर्जन के साथ मुड़ा। झटपट राजकुमारी तलवार निकाल कर सामने आ गईं। बाघ क्षणभर तक राजकुमारी को घूरता रहा और तब दहाड़ता हुआ उछला। वह शायद एक ही वार में राजकुमारी का काम तमाम कर देना चाहता था परन्तु बीच ही में एक बर्छा उसकी गर्दन को बेधता हुआ निकल गया। यह बर्छा कीर्तिराय ने मारा था। तेंदुआ लड़खड़ाता हुआ गिर पड़ा। उसकी जान निकल गई। कीर्तिराय ने राजकुमारी को लड़ने का अवसर नहीं दिया। शायद वह डर गये थे कि कहीं उनकी लाड़ली तेंदुए के झपेटे में न आजाय।

पिता का यह सहयोग पुत्री को बहुत अखरा। वह मुँह बनाती हुई बिगड़ कर बोलीं, 'आपको मेरे शिकार पर वार करने का क्या अधिकार था? आपने अपने बर्छे का क्यों उपयोग किया! क्या आप समझते थे कि मैं उसकी विकरालता से भयभीत होकर उसका सामना नहीं कर पाती? अब जब तक मैं दूसरा तेंदुआ नहीं मारूँगी तब तक घर नहीं लौटूँगी। आपने जब किसी प्रकार की सहायता न देने का वचन दिया था, तो फिर बर्छा क्यों मारा? मैं घर नहीं जाऊँगी, नही जाऊँगी, नहीं जाऊँगी।' राजकुमारी बच्चों की तरह ठुनुकने लगीं।

राजकुमारी के सिर पर हाथ फेरते हुये कीर्तिराय मुस्करा कर बोले, 'मेरे पास पिता का हृदय है न बेटे। मैं जानता था कि

तेंदुआ तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता है लेकिन तब भी मैं अपने को न रोक सका। मुझे विवश होकर बर्छा चलाना पड़ा। सन्तान के प्रति ऐसा मोह सबको होता है दुर्गा। चलो चलें। तुम्हारी वीरता और साहस की जितनी प्रशंसा की जाय वह कम है। अब जब दुबारा शिकार को आयेंगे तो तुम्हें किसी तरह की सहायता न देंगे।'

राजकुमारी मुँह लटकाये पिता के साथ चल पड़ीं।

दोनों सैनिक तेंदुए को घसीटते हुए पीछे पीछे चलने लगे।

× × ×

किसी समय चन्देल राजपूत बड़े शक्तिशाली थे। उन्होंने अपनी वीरता और एकता के बल पर ही एक राज्य का निर्माण कर लिया था। जिसके अन्दर महोबा, कालिंजर, खजुराहो तथा आस-पास के सारे प्रदेश थे। इनके शौर्य से भयभीत होकर अन्य पड़ोसी रियासतों ने भी इनकी आधीनता स्वीकार कर ली थी। और इस प्रकार इनके राज्य की सीमा बहुत बढ़ गई थी। इन की तूती बोलने लगी थी। सारे देश में सम्मान बढ़ गया था। समय बीतता गया। चन्देलों की शक्ति बढ़ती गई, राज्य फैलता गया। पर यह फैलाव बहुत समय तक न चल सका। इनके अन्दर धीरे-धीरे मनमुटाव का अंकुर उगने लगा। फूट की भावना फैलने लगी। मामूली मामूली बातों पर ये एक दूसरे को नीचा दिखाने की चेष्टा करने लगे। परिणाम यह हुआ कि आपसी लड़ाईयाँ शुरू हो गईं। एकता की कड़ी टूट गई और वह कई हिस्सों में बँट गईं। अलग अलग जत्थे बन गये और एक दूसरे पर अपना अधिकार जमाने का प्रयत्न करने लगे।

इस आपसी फूट से मुसलमान राजाओं ने लाभ उठाया। उन लोगों ने राज्य को हड़पना आरम्भ कर दिया और अधिक भागों पर अपनी सत्ता स्थापित कर ली।

जब चन्देलों की शक्ति बहुत कम हो गई तो ये अपनी पुरानी राजधानी खजुराहो को छोड़कर कालिंजर दुर्ग में आ बसे और उसे ही इस छोटे से राज्य की राजधानी बना लिया। कीर्तिराय उसी राज्य के राजा थे और कालिंजर दुर्ग में रह रहे थे। राजकुमारी दुर्गावती इनकी एकमात्र सन्तान थीं जो रूप, गुण और वीरता में अनोखी थीं। कीर्तिराय को अपनी पुत्री पर बड़ा गर्व था। उन्हें विश्वास था कि दुर्गावती अपने साहस और गुणों से अपने नाम के साथ साथ उनके नाम को भी अमर कर देंगी।

२

कालिंजर के राजगुरू बड़े विद्वान पुरुष थे। साथ ही वह राजनीति के दाँव-पेंच को भी भली-भांति समझते थे और समय-समय पर कीर्तिराय को इस सम्बन्ध में सलाह भी दिया करते थे। कीर्तिराय उनकी योग्यता और उनकी सूझ-बूझ का लोहा मानते थे तथा उन्हीं के अनुसार काम भी किया करते थे। इतना ही नहीं, राजगुरू अपनी वीरता और साहस में भी विख्यात थे। वह सब प्रकार के हथियार चलाना जानते थे। दो-एक बार उन्होंने राजा के संग लड़ाइयों में भी भाग लिया था और अपनी बहादुरी से वैरियों के दाँत खट्टे कर दिये थे।

इन्हीं राजगुरू की देख-रेख में राजकुमारी दुर्गावती को शिक्षा मिल रही थी। एक दिन राजगुरु ने दुर्गावती को एक कहानी सुनाई। वह बोले, 'राजकुमारी, जब सिकन्दर ने पोरस को हरा दिया तो उसने समझा कि अब पूरे भारतवर्ष पर उसका अधिकार हो जायेगा। उसे अपनी वीरता पर बड़ा गर्व हुआ। वह हिन्दुस्तान के लोगों को कायर और भगोड़ा समझने लगा। और इसी घमंड में उसने एक दिन अपने दरबार में कहा कि यह सोचकर बड़ा आश्चर्य लगता है कि आज तक इस हिन्द में मुझे कोई ऐसा बहादुर नहीं मिला जो क्षणभर के लिये मुझे भयभीत कर सका हो। यहाँ के सैनिकों और सरदारों में बहादुरी कहने भर को भी नहीं है। सब डरपोक और झूठी शान

बघारने वाले हैं। दरबार में बैठे हुये राजाओं और सरदारों को सिकन्दर की यह बात बड़ी बुरी लगी, परन्तु वे खून का घूँट पीकर रह गये। वे विवश थे क्योंकि वे पराजित हो चुके थे। किसी के आधीन हो जाने पर सब कुछ सहन करना पड़ता है। गुलामी की ज़िन्दगी बड़ी अपमानित ज़िन्दगी होती है, राजकुमारी। खैर, दरबार समाप्त होने पर सब अपने-अपने घर चले गये। पर भारतीय वीरों के लिए कहे हुए सिकन्दर के ये अपमान भरे शब्द एक दूसरे के मुँह से निकल कर हवा की भांति चारों ओर फैल गये। जो सुनता, वही क्रोध से एक बार तमतमा उठता। लेकिन सिकन्दर को नीचा दिखाने का साहस किसमें था? किसी के अन्दर हिम्मत नहीं थी कि वह कोई उपाय सोच कर सिकन्दर को मुँहतोड़ जवाब देता।

राजकुमारी ने अचम्भे से राजगुरू की ओर देखते हुए पूछा, 'फिर क्या किसी ने भी सिकन्दर को नीचा नहीं दिखाया?'

राजगुरू मुस्कराकर बोले, 'दिखाया क्यों नहीं? क्या हमारा देश कभी वीरों से खाली रहा है? यह तो आपसी फूट का फल है कि आज यहाँ मुसलमानों का शासन है, नहीं तो भारतवर्ष सदा से शूर-वीरों, विद्वानों और महात्माओं का देश रहा है। संसार में कोई देश इस सानी का नहीं है। यही एक देश है जहाँ सारे संसार के साथ भाई-चारा बनाए रखने का पाठ पढ़ाया जाता है। यहाँ के सम्राटों ने कभी किसी को सताया नहीं और न किसी देश पर आक्रमण करके उसे अपना दास बनाये रखने का प्रयत्न ही किया। ऐसी·· ···।'

राजकुमारी ने बीच में टोक दिया, 'यही तो उन्होंने गलती

की गुरुवर ! अगर उन्होंने भी विदेशों पर अपना अधिकार जमाया होता तो आज हम किसी के दास न होते। अच्छा, आगे की कहानी बताइये।'

राजकुमारी के उत्तर से राजगुरु मन ही मन प्रसन्न हुए और आगे कहानी कहने लगे। वह बोले, 'उस समय, राजकुमारी, तक्षशिला विश्वविद्यालय के आचार्य चाणक्य की देख-रेख में चन्द्रगुप्त मौर्य भारत को एकता की कड़ी में बाँधने का प्रयत्न कर रहे थे। आचार्य चाणक्य ने उन्हें बताया था कि जब तक सारा देश एक सम्राट् के झंडे के नीचे आकर विदेशियों के विरुद्ध मोर्चा नहीं बनायेगा तब तक उन्हें देश से खदेड़ना सम्भव नहीं हो सकेगा। चन्द्रगुप्त ने इस सीख को गाँठ बाँध लिया था और उसी प्रयत्न में जी-जान से जुट पड़े थे। चन्द्रगुप्त देखने में बहुत सुन्दर और शरीर से बलिष्ठ थे। साहस उनमें अपार था। वह उन दिनों अपनी बहादुरी में बेजोड़ थे। अचानक एक दिन उनके कान में भी सिकन्दर वाली बात पड़ी। एकबारगी उनका खून खौल उठा। उन्होंने मन ही मन प्रतिज्ञा की कि इस अपमान का बदला वह सिकन्दर से अवश्य लेंगे। कई दिनों तक सोचते रहने के उपरान्त उन्हें एक उपाय सूझ गया। एक रात टहकती चांदनी में उन्होंने यूनानी वस्त्र धारण किये और निडर होकर सिकन्दर के पड़ाव की ओर चल पड़े। पड़ाव के चारों ओर सैनिकों का पहरा था। परन्तु जिन शब्दों को कहकर अन्दर प्रवेश किया जा सकता था उसका पता चन्द्रगुप्त ने पहले से ही लगा रखा था। वह उन्हीं शब्दों का उच्चारण करते हुये अन्दर घुस गये। किसी भी यूनानी सैनिक को सन्देह न हो सका।

इतना ही नहीं, उन्होंने उन सैनिकों को भी चकमा दिया जो सिकन्दर की रावटी के चारों ओर रक्षा के हेतु पहरा दे रहे थे।'

राजकुमारी ने अचम्भे से आँखें फाड़कर राजगुरू को देखा और पूछा, 'यह कैसे ?'

राजगुरू ने बताया, 'यहाँ भी जिस शब्द को कहकर सिकन्दर की रावटी में प्रवेश किया जा सकता था उसका उच्चारण उन्होंने किया। सैनिक एक ओर हट गये। चन्द्रगुप्त, सिकन्दर की रावटी में घुस गये। सिकन्दर सो रहा था परन्तु जैसा कहा गया है कि बहादुरों की नींद कुत्ते की नींद जैसी होती है जो तनिक आहट मिलने पर भी खुल जाती है, ठीक उसी प्रकार चन्द्रगुप्त के अन्दर आते ही सिकन्दर की नींद खुल गई। वह उठा तब तक चन्द्रगुप्त ने अपनी तलवार उसके सीने से लगा दी और पुनः उसे लेट जाने के लिये मजबूर कर दिया।'

राजकुमारी उछल पड़ीं, 'वाह ! उन्होंने कमाल कर दिया। वह भी बड़े सतर्क थे।'

राजगुरू बोले, 'ऐसे कार्यों में सतर्कता की आवश्यकता तो होती ही है। केवल वीरता से थोड़े काम बनता है। फिर चन्द्रगुप्त ने सिकन्दर से कहा कि अब तो उसे विश्वास हो गया कि हिन्द में ऐसे भी वीर हैं जो इतनी सुरक्षा के रहते हुए भी उसकी रावटी में घुसकर उसके जीवन का अन्त कर सकते हैं। उसके सारे मनसूबों और अहंकार पर पानी फेर सकते हैं ? सिकन्दर मौन लेटा रहा। उसने कोई उत्तर नहीं दिया। उसे जीवन में प्रथम बार इतना अपमानित होना पड़ा था। चन्द्रगुप्त

ने तलवार हटा ली और यह कहते हुये चले गये कि उसे अपने घमण्ड में इतना मतवाला नहीं हो जाना चाहिये।' सिकन्दर मौन उसी प्रकार लेटा रहा।

राजकुमारी का मुँह उतर आया और उदास स्वर में बोलीं, 'सम्राट् चन्द्रगुप्त ने सब चौपट कर दिया। इतना सुन्दर अवसर मिलने पर भी उन्होंने उसका उपयोग नहीं किया। अगर सिकन्दर का काम तमाम कर दिया होता तो आज हमारे देश का दूसरा रूप होता। इतिहास बदल गया होता। चन्द्रगुप्त ने दूरदर्शिता से काम नहीं लिया।'

राजगुरू टकटकी लगाये राजकुमारी को देख रहे थे। उसकी बात समाप्त होने पर वह बोले, 'पर राजकुमारी, क्या किसी वीर के लिये उचित है कि वह चुपके से रात में घुसकर किसी का वध कर दे! यह महान् अधर्म समझा जाता है राजकुमारी! ऐसा नहीं होना चाहिये।'

राजकुमारी ने उत्तर दिया, 'अगर यह अधर्म समझा जा सकता है तो भगवान् कृष्ण ने महाभारत में प्रतिज्ञा करने के बाद भी हथियार क्यों धारण किया था? उन्हें भी अपनी प्रतिज्ञा का पालन करना चाहिये था? वीरता के नाम पर यह भी तो कलंक हुआ। क्यों इसे भी अधर्म नहीं कहा जा सकता है?'

राजगुरू प्रसन्न हुए परन्तु ऊपर से वह उसी प्रकार बोले, 'बिल्कुल कहा जा सकता है। यह तो अधर्म है ही। जब उन्होंने युद्ध के मैदान में हथियार न उठाने की प्रतिज्ञा की थी तो फिर उनका हथियार उठाकर लड़ने के लिये तैयार हो जाना अनुचित और अधर्म है।'

राजकुमारी ने आश्चर्य प्रगट किया और कहा, 'पर भगवान कृष्ण तो उसे अनुचित और अधर्म नहीं कहते । उनके मत के अनुसार राजनीति में सब कुछ करने की छूट है । उन्होंने बार-बार कहा है कि वैरी को जैसे भी हो पराजित करके अपने आधीन करो । जहाँ झूठ बोलना हो वहाँ झूठ बोलो और जहाँ छल-कपट की आवश्यकता हो वहाँ छल-कपट से काम निकालो। दुश्मन पर दया दिखाना या उसे माफ कर देना राजनीति के सिद्धान्त के विरुद्ध है और मैं भी समझती हूँ कि उनकी यह नीति उचित है। राजनीति में इसी नीति को अपनाना चाहिये। अगर इस नीति का हमारे पूर्वजों ने सहारा लिया होता तो शायद आज हमारी यह दशा न होती।'

राजगुरू ने दुर्गावती के सिर पर हाथ फेरा और प्रसन्न होकर बोले, 'मैं तुमसे यही सुनना चाहता था राजकुमारी। वैरियों के संग इसी नीति का पालन होना चाहिये । चन्द्रगुप्त ने बड़ी भूल की थी। उन्हें अत्याचारी सिकन्दर का वध करके रास्ते का काँटा साफ कर देना चाहिये था। लेकिन हम भारत-वासियों की सच्चाई, ईमानदारी और वफादारी से सदा विदे-शियों ने अनुचित लाभ उठाया है और आज सम्राट् अकबर भी इसी कारण दिन पर दिन शक्तिशाली बनता चला जा रहा है। सारे राजपूत सरदार उसकी मुट्ठी में आ गये हैं। वह सारे देश को अपनी जंजीर में जकड़ लेना चाहता है । खैर, भगवान मालिक है। अब जाओ। तुमसे मैंने बड़ी-बड़ी आशायें लगा रखी हैं।' राजगुरू चुप हो गये।

राजकुमारी चरण छूती हुई उठकर महल में चली गई।

३

आजकल के मध्यभारत का उत्तरी भाग उन दिनों गोंडवाना राज्य के अन्दर था। यह राज्य पूरब में रतनपुर से लेकर पश्चिम में रैसीना तक तथा उत्तर में रींवा से लेकर दक्षिण भारत की सीमा तक फैला हुआ था। इस राज्य की राजधानी गढ़मण्डल थी। इस समय यहाँ के राजा दलपतिशाह थे। यह बड़े वीर और उदार स्वभाव के थे। इनकी वीरता की ख्याति इतनी फैल गई थी कि मुगल सम्राट् अकबर को भी साहस नहीं हो रहा था कि वह आक्रमण करके उस राज्य को अपने अधिकार में कर ले। यद्यपि उसकी इच्छा बहुत थी। अकबर डरता था कि अगर वह दलपतिशाह से पराजित हो गया तो उसके लिए बड़ी लज्जा की बात हो जायगी। इसलिए अभी वह मौन था और अपनी शक्ति को अधिक बढ़ाने में लगा हुआ था।

दलपतिशाह की वीरता और गुणों की चर्चा राजकुमारी दुर्गावती भी सुना करती थीं। वह वीर बाला थीं और वीर को ही अपना पति बनाना चाहती थीं। उनके हृदय में दलपतिशाह के लिये स्थान बन गया था। उधर दलपतिशाह ने भी राजकुमारी के रूप और वीरता की चर्चा सुन रखी थी। वह भी राजकुमारी से विवाह करने के लिये सोचने लगे थे परन्तु उन्होंने अपना एक गुप्तचर भेज कर सच्ची जानकारी कर लेना उत्तम

समझा। उन्होंने एक पुरुष और एक महिला को कालिंजर भेजा। लगभग दो महीने बाद पूरी जानकारी के साथ ये दोनों गढ़मण्डल लौटे। दलपतिशाह ने बड़ी उत्सुकता से पूछा, 'क्या रहा ?'

स्त्री बोली, 'महाराज ने जितना सुन रखा है, उस से बहुत अधिक। राजकुमारी दुर्गावती की जितनी प्रशंसा की जाय वह थोड़ी है। वह बहुत सुन्दरी हैं। और भगवान ने उनको वैसी ही बुद्धि भी दे रखी है। बोलती हैं तो फूल झड़ते हैं। स्वभाव ऐसा है कि कठोर से कठोर हृदय का मनुष्य भी उनके वश में आ सकता है। महाराज ! थोड़े में इतना समझ लें कि अगर वह महारानी बन कर गढ़मण्डल आ गईं तो सोने में सुगन्ध मिल जायेगा।'

दलपतिशाह ने सिर घुमाकर पुरुष की ओर देखा और पूछा 'क्या सचमुच दुर्गावती तेंदुए और चीते का शिकार आमने-सामने तलवार से लड़कर करती हैं ?'

पुरुष ने उत्तर दिया, 'जी हाँ महाराज ! वह वीरता में बिल्कुल दुर्गा की अवतार हैं। हथियारों के चलाने में जो निपुणता उन्होंने प्राप्त की है वैसी आप को कम देखने में मिलेगी। हमने स्वयं अपनी आँखों देखा है। उन्हें शिकार का भी बड़ा शौक है। राजकुमारी, महाराज के ही योग्य हैं। महाराज ने यदि उन्हें महारानी बना लिया तो सचमुच सोने में सुगन्ध मिल जायेगी।'

दलपतिशाह मुस्कराये और उठने को हुए कि वह स्त्री बोल पड़ी, 'और महाराज को यह सुनकर और भी अचरज होगा कि राजकुमारी ने महाराज को ही अपना पति माना है। वह

विवाह करेंगी तो महाराज से वरना करेंगी ही नहीं।'

दलपतिशाह का मन खिल उठा और आश्चर्य से बोले, 'क्या ऐसा वह कह रही थीं ?'

'हाँ महाराज ! मैंने उनसे अपना रहस्य खोल दिया था । वह आपके सिवा और किसी को पति नहीं बना सकती हैं।'

दलपतिशाह खड़े हो गये और कुछ सोचते हुए अन्दर महल में चले गये ।

तीन चार दिनों बाद दलपतिशाह ने अपने मंत्री अधारसिंह और राजगुरू को विवाह के प्रस्ताव के साथ कालिंजर भेज दिया। कालिंजर में अतिथियों का बड़ा स्वागत-सत्कार हुआ और दूसरे दिन दरबार में वे कीर्तिराय के सामने लाये गये । राजा ने आने का कारण पूछा ।

अधारसिंह ने खड़े होकर बताया, 'मैं गोंडवाना के राजा श्रीमन्त दलपतिशाह का राजकुमारी दुर्गावती से विवाह के लिए प्रस्ताव लेकर आया हूँ । हमारे महाराज ने राजकुमारी की वीरता और गुणों की बड़ी प्रशंसा सुन रखी है। वह राजकुमारी को गोंडवाना की महारानी बनाना चाहते हैं और यही कारण है कि बिना किसी बात को ध्यान दिये, उन्होंने आपके सामने प्रस्ताव भेज दिया है। वह राजकुमारी को योग्य समझते हैं।'

कीर्तिराय के चेहरे पर गंभीरता आई और कुछ रूखे स्वर में बोले, 'सो तो ठीक है मंत्री महोदय ! दलपतिशाह का प्रस्ताव उत्तम है परन्तु एक बात उन्होंने नहीं सोची।'

अधारसिंह—'क्या ?'

कीर्तिराय—'वंश के अनुसार वह नीची श्रेणी के क्षत्रिय हैं। हम उन्हें अपनी कन्या कैसे दे सकते हैं ? कुल की मर्यादा तो निभानी ही पड़ती है। आपने हम चन्देलों में कभी इस प्रकार का विवाह देखा है ?'

अधारसिंह को कीर्तिराय की बात तनिक बुरी लगी परन्तु फिर भी उन्होंने बड़े कोमल शब्दों में कहा,'महाराज का कहना अनुचित नहीं है लेकिन मेरे विचार से विवाह के लिये गुण और योग्यता का अधिक ध्यान रखना चाहिये। दुर्गावती-जैसी वीर और सब गुणों से पूर्ण राजकुमारी के लिये वैसे ही योग्य पति की आवश्यकता है।'

कीर्तिराय—'इसमें क्या सन्देह है ? मैं इससे कब इन्कार कर सकता हूँ। पर यह भी तो इन्कार नहीं किया जा सकता कि कुल की मर्यादा सबसे ऊपर है। इसे तोड़ा नहीं जा सकता। राजकुमारी का विवाह मैं अपने से नीची श्रेणी वाले क्षत्रिय के संग कैसे कर सकता हूँ ? यह तो अपमान की बात हुई।'

अधारसिंह—'महाराज, हम हिन्दुस्तानियों ने इसी मान-अपमान के चक्कर में फंसकर तो अपने को बरबाद कर लिया है। आपस में लड़लड़कर अपने को शक्तिहीन बना लिया है। वरना हमारे देश पर क्या कभी मुसलमानों का अधिकार हो सकता था ? क्या हमारी ऐसी दशा हो सकती थी ? आप देख रहे हैं किस प्रकार सम्राट् अकबर अपनी चतुराई से हमारी जड़ खोदकर हमारी बुनियाद को मिटा देना चाहता है। एकएक करके वह सारे हिन्दू राजाओं को रौंद कर कमज़ोर बनाता चला जा रहा है। उसे भय है कि आप सब अगर आपसे

भेद-भाव मिटाकर कहीं एक हो गये तो वह कहीं का न हो पायेगा। उसका……!'

कीर्तिराय बीच में बोल उठे, 'अधारसिंह, यह कोई बात नहीं हुई। सदा सबका समय एक जैसा नहीं रहता। यह ईश्वर की मर्ज़ी है। कभी किसी को ऊँचा उठाता है तो कभी किसी को। कभी संसार में हमारी तूती बोलती थी, अब मुसलमानों की बोल रही है। इसके लिये क्या किया जा सकता है। हाँ, अपने धर्म-कर्म और मान मर्यादा की रक्षा होनी चाहिये। सो हम कर रहे हैं। हम दलपतिशाह से अपनी पुत्री का विवाह कर अपने पूर्वजों के नाम पर कलंक नहीं लगायेंगे। यह भी तो इज़्ज़त की बात है।'

अधारसिंह ने समझ लिया कि कीर्तिराय विवाह करने पर तैयार नहीं हो सकते हैं, फिर भी वह अपने प्रयत्न से चूकने वाले नहीं थे। उन्होंने कहा, 'पर महाराज, क्या राजकुमारी से इज़्ज़त अधिक प्यारी है? राजकुमारी का जीवन कितने आनन्द से कटेगा यह तो सोचिये?'

कीर्तिराय—'अधारसिंह, मुझे शिक्षा देने की कोशिश न करो। मुझे अपनी कन्या के सुख-दुःख का ध्यान है। दलपतिशाह कितना चालाक है, मुझे मालूम है। वह मुझे नीचा दिखाना चाहता है। लेकिन तुम जाकर यह कह देना कि मैं उससे डरता नहीं और न किसी प्रकार उससे कमज़ोर हूँ। अब तुम जा सकते हो।'

अधारसिंह को खड़ा हो जाना पड़ा, फिर भी उन्होंने कहा, 'महाराज ने जो अनुमान लगाया है वह सत्य नहीं है। हमारे

महाराज ने दोस्ती का हाथ बढ़ाया है, दुश्मनी का नहीं। हम जाते-जाते महाराज से विनती करेंगे कि एक बार वह ठंडे दिमाग से पुनः इस प्रस्ताव पर विचार करने का कष्ट करें।' अधारसिंह ने मस्तक नवाकर प्रणाम किया और राजगुरू के संग दरबार के बाहर निकल गये। कीर्तिराय ने बात स्वीकार नहीं की।

राजकुमारी को जब मालूम हुआ कि दलपतिशाह की ओर से आये हुये विवाह के प्रस्ताव को उनके पिता ने ठुकरा दिया है तो उनका मन दुःख से भर आया। वह रुआँसी हो आईं। उनकी सारी कल्पना मिट्टी में मिल गई। वह सोचने लगीं कि उन्हें अब क्या करना चाहिए। परन्तु उन्हें कोई उपाय समझ में नहीं आया। उन्होंने बहुत पहले से दलपतिशाह को अपने हृदय में पति का स्थान दे रखा था। इस कारण वह दूसरे व्यक्ति से विवाह नहीं कर सकती थीं और साथ ही वह पिता की प्रतिष्ठा में भी किसी प्रकार का धब्बा नहीं लगने देना चाहती थीं। अन्त में उन्होंने मौन रहना ही उचित समझा और निश्चय किया कि जब उनके पिता किसी दूसरे व्यक्ति से विवाह करने का प्रस्ताव रखेंगे तब वह साफ-साफ अपने मन की बात कह देंगी और विवाह करने से इन्कार कर देंगी।

दुर्गावती-जैसी समझदार लड़की के लिये केवल यही एक रास्ता ठीक था।

४

अधारसिंह ने गढ़मण्डल में आकर दलपतिशाह से सारी बातें बतलाईं। राजा को बड़ी पीड़ा पहुँची। साथ ही उन्हें क्रोध भी आया कि कीर्तिराय ने उन्हें नीची श्रेणी का क्षत्रिय कहकर उनका अपमान किया है। वह कई दिनों तक उत समस्या पर सोचते-विचारते रहे। वह दुर्गावती की ओर अधिक आकर्षित हो चुके थे। उन्हें किसी भी दशा में दुर्गावती से विवाह करना था। परन्तु राजकुमारी को प्राप्त करने का अब केवल एक उपाय था, और वह था युद्ध में कीर्तिराय को पराजित करना। दलपतिशाह ने युद्ध करने का निश्चय कर लिया। उन्होंने अधारसिंह से सलाह की। उन्होंने भी युद्ध करने की राय दी। दुर्गावती को गढ़मण्डल की रानी बनाने का यही एक मार्ग था।

बात तय हो गई। दलपतिशाह ने कीर्तिराय को पत्र लिखा कि अगर वह अपनी पुत्री दुर्गावती का विवाह उनसे नहीं करेंगे तो उन्हें विवश होकर उनके राज्य पर चढ़ाई करनी पड़ेगी। पत्र का उत्तर तुरन्त आया। कीर्तिराय ने दलपतिशाह की चुनौती स्वीकार करली थी। वह युद्ध के लिये तैयार थे। फिर क्या था, दलपतिशाह ने अपनी सेना को आदेश दिया और बड़े उत्साह के साथ कालिंजर को चल पड़े। दलपतिशाह अपनी सेना सहित कालिंजर आ पहुँचे और कुछ दूर पर पड़ाव

डाल दिया। आक्रमण की दोनों ओर से प्रतीक्षा होने लगी।

उधर कीर्तिराय ने भी तैयारी करली थी। वह दलपतिशाह के घमंड को चूर कर देना चाहते थे। कीर्तिराय चाहते थे कि पहले आक्रमण दलपतिशाह की ओर से हो। वह स्वयं कभी अपनी ओर से आक्रमण करना नहीं चाहते थे। उधर दलपतिशाह चाहते थे कि पहले आक्रमण कीर्तिराय की ओर से हो। यद्यपि प्रथम आक्रमण दलपतिशाह की तरफ से ही होना चाहिये था, परन्तु उसमें आक्रमण न करने का एक कारण था। युद्ध होने से पहले वह राजकुमारी से किसी न किसी तरह एक बार मिल लेना चाहते थे। उनसे कुछ बातें करना चाहते थे। क्योंकि उनको भय था कि अगर कीर्तिराय पराजित हुये तो कहीं वह दुर्गावती का वध न करा दें। इसलिये दलपतिशाह रोज़ रात में किसानों-जैसा भेस बनाकर अपनी रावटी से चुपके से निकल जाते और यह पता लगाने का प्रयत्न करते कि किस प्रकार राजकुमारी से उनकी मुलाकात हो सकेगी।

उधर राजकुमारी की भी चिन्ता बढ़ गई थी। उनके लिए दलपतिशाह यहाँ तक बढ़ सकते हैं, उन्हें स्वप्न में भी आशा नहीं थी। युद्ध में कौन जीते और कौन हारे, इसका क्या ठिकाना था। दलपतिशाह के पराजित होने पर उनके हृदय की दुनियाँ लुटती थी और पिता के पराजित होने पर उनकी प्रतिष्ठा जाती थी। राजकुमारी के लिये दोनों तरफ से मौत थी। उनकी उलझन बढ़ गई। उन्हें कुछ समझ में नहीं आरहा था। वह न तो किसी के विजय की मनौती मान सकती थीं और न किसी की पराजय की। 'दुविधा में दोनों गये माया मिली न राम'

वाली दशा उनकी हो रही थी। अन्त में उन्होंने इस उलझन और पीड़ा से छुटकारा पाने के लिये आत्म-हत्या कर लेना उचित समझा। उन्होंने कटार निकाली और छाती में भोंक-कर जीवन अन्त करने ही वालीं थीं कि अचानक मन ने कहा कि जिसे उन्होंने अपना स्वामी माना है, उनका एक बार दर्शन तो कर ले। राजकुमारी का हाथ रुक गया। मन ने जो कहा था वह उचित था। दलपतिशाह के दर्शनों के उपरान्त ही उन्हें अपने जीवन का अन्त करना चाहिये। अब वह उपाय सोचने लगीं कि किस प्रकार दलपतिशाह उसे देखने को मिल सकेंगे। उन्हें एक तरकीब समझ में आ गई।

कालिंजर दुर्ग के नीचे कीर्तिराय की सेना दलपतिशाह के मुक़ाबिले के लिये डटी हुई थी। कीर्तिराय रोज़ सबेरे और शाम को सैनिकों का निरीक्षण करते और उन्हें उत्साह दिलाते। आज दुर्गावती भी अपने पिता के संग सेना-निरीक्षण के लिए निकलीं। कीर्तिराय को बड़ी प्रसन्नता हुई। राजकुमारी घोड़े पर सवार घंटों अपने पिता के साथ घूमती रहीं। लौटते समय उन्होंने पूछा, 'पिताजी, क्या आपको गढ़मण्डल की सेना के विषय में कुछ जानकारी है ?'

कीर्तिराय—'कैसी जानकारी बेटे ?'

राजकुमारी—'मेरा मतलब है कि उधर के सैनिकों की संख्या क्या है ? कैसी तैयारी है ? किस प्रकार उनके लड़ने की योजना है ? अभी तक आक्रमण न करने का कारण क्या है ? इन बातों की जानकारी हो जाने पर आप लड़ाई अच्छी लड़ सकते हैं। तब उन्हें हराने में आपको देर नहीं लगेगी।'

कीर्तिराय को दुर्गावती की बात पसन्द आई। उनके दिमाग में वह चीज़ कभी नहीं आई थी। उन्होंने कहा, 'सुझाव तुम्हारा उत्तम है दुर्गा परन्तु इसे करने के लिये किसी चतुर पुरुष की आवश्यकता है।'

राजकुमारी—'चतुर के साथ-साथ बहुत विश्वासपात्र भी होना चाहिये पिताजी! ऐसा न हो कि पकड़े जाने पर उलटे यहाँ का भेद खोल दे।'

कीर्तिराय—'हाँ, यह भी सोचने वाली बात है। प्राण का भय सब कुछ करा सकता है।' कीर्तिराय सोचने लगे और थोड़ी देर बाद बोले, 'नहीं हो सकता। इस समय किसी पर भरोसा करके उसे यह काम सौंपना बुद्धिमानी न होगी।'

राजकुमारी ने झट से कह दिया, 'अगर मैं इस काम को करूँ तो क्या आप आज्ञा देंगे ?'

कीर्तिराय ने गर्दन हिलाई, 'बिल्कुल नहीं। यह काम तुम्हारे करने का नहीं है। यदि तुम्हीं से कराना हुआ तो मैं स्वयं नहीं कर सकता ?'

राजकुमारी—'आप कैसे कर सकते हैं! आपको जानने-पहिचानने वाले सभी हैं। आप अपने को जल्दी छिपा नहीं सकते हैं। मैं...।'

कीर्तिराय बीच में बोल उठे—'खैर, यह काम तुम्हारे करने का नहीं है। और वैसे भी दलपतिशाह से मेरी शक्ति कम नहीं है। वह जिस घमंड में यहाँ आया है उसे मैं चूर-चूर कर दूँगा। चन्देलों से अभी उसने टक्कर नहीं ली है। ऐसा रगड़ूँगा कि भविष्य में सिर उठाने का साहस न होगा। तुम्हें

चिन्तित होने की ज़रूरत नहीं।'

राजकुमारी को चुप हो जाना पड़ा। उन्होंने दलपतिशाह को देखने का जो बहाना निकाला था, वह असफल सिद्ध हुआ। दुर्ग का द्वार आ गया। दोनों अन्दर चले गये।

रात भर राजकुमारी पलंग पर करवटें बदलती रहीं। उन्हें कोई उपाय समझ में नहीं आया, फिर भी उन्हें दलपतिशाह के दर्शन तो करने ही थे। इसलिये अन्त में उन्होंने निर्णय किया कि चाहे जो भी हो, वह कल रात में पुरुष का भेष बना कर दलपतिशाह के पड़ाव को जायेंगी। दूसरे दिन जब दीया-बाती का समय आया तो राजकुमारी सब की आँखों में धूल झोंकती हुई दुर्ग के बाहर निकल गईं। उन्होंने नौकरों वाले कपड़े पहन रखे थे। राजकुमारी जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाती हुई पड़ाव की ओर चल पड़ीं।

चाँदनी निकल आई थी। सारी पृथ्वी चमकने लगी थी। समय बड़ा सुहावना हो आया था। दलपतिशाह का पड़ाव समीप आ गया था। राजकुमारी की धड़कन बढ़ गई थी। किस प्रकार वह अपने देवता के दर्शन पा सकेंगी, यही सोचती हुई वह चली जा रही थीं। अचानक उन्हें सामने से कोई आता हुआ दिखलाई पड़ा। उन्हें आश्चर्य हुआ। यह रास्ता बहुत निर्जन था। इस समय इधर से किसी का आना जाना नहीं होता था। किन्तु अब जो कुछ भी हो। जब ओखली में सिर डाल दिया तो मूसलों से क्या डरना! वह उसी प्रकार बढ़ती गईं। समीप आने पर उधर से आने वाला व्यक्ति तनिक ठिठका। उसने ध्यान से राजकुमारी को देखा और आगे बढ़ गया।

राजकुमारी भी आगे बढ़ गईं। उनका भय जाता रहा। वह कोई किसान था। लेकिन पता नहीं क्या सोचकर राजकुमारी चलते-चलते रुक गईं और उन्होंने मुड़कर पुकारा, 'ओ दाऊजू! दाऊजू!'

वह मनुष्य खड़ा हो गया और बोला, 'क्या है?'

'एक बात तो सुन लीजिये।'

वह लौटकर राजकुमारी के समीप आ गया और पूछा—'कहो। क्या है?'

राजकुमारी—'क्या आप पड़ाव की ओर से आ रहे हो?'

'क्यों?'

राजकुमारी पुरुषों-जैसा बोलीं, 'मैं जानना चाहता था कि अगर मैं इधर से जाना चाहूँ तो इस समय जा सकता हूँ या नहीं?'

मनुष्य—'क्या तुम राजा की सेना में काम नहीं करते हो?'

राजकुमारी—'नहीं।'

मनुष्य ने तनिक चकित होकर कहा, 'अच्छा! तुम्हें जाना कहाँ है?'

राजकुमारी—'जाना तो मुझे पड़ाव पर है।'

मनुष्य—'पड़ाव पर?'

राजकुमारी—'हाँ।'

मनुष्य—'क्यों?'

राजकुमारी—'राजा से मिलने।'

मनुष्य राजकुमारी के कुछ और समीप आगया और बोला, 'राजा से मिलने इस समय? कहाँ के रहने वाले हो?'

राजकुमारी—'कालिंजर के।'

मनुष्य—'कालिंजर के रहने वाले हो और गढ़मण्डल के राजा से मिलने जा रहे हो ? यह कैसी उलटी बात ? जो कुछ कहना है राजा से क्यों नहीं कहते ? वहाँ जाने की क्या तुक है ?'

राजकुमारी—'तुक है। वह बात गढ़मण्डल के राजा से ही कही जायेगी। अच्छा आप जाइये।' राजकुमारी मुड़ पड़ीं। उन्होंने जिस जानकारी के विचार से इस मनुष्य से बातें की थीं, वह पूरी नहीं हुई।

उस मनुष्य ने आगे बढ़कर राजकुमारी का हाथ पकड़ लिया और बोला, 'वाह। अब मैं बिना बात सुने तुम्हें जाने नहीं दे सकता। तुम्हें बात बतानी होगी वरना मैं महाराज कीर्तिराय के पास तुम्हें पकड़ कर ले चलूँगा।'

राजकुमारी ने जल्दी से हाथ खींचते हुए तनिक रूखे स्वर में कहा—'मैं गद्दार नहीं हूँ जो किसी भेद को बताने जा रहा हूँ। आप मुझे गलत न समझें। मैं गढ़मण्डल के राजा को चेतावनी देने जा रहा हूँ, चेतावनी।'

मनुष्य—'चेतावनी। कैसी चेतावनी ?'

राजकुमारी—'यही कि एक लड़की के पीछे हज़ारों लोगों की जानें लेने की क्या तुक है ? क्या वह किसी दूसरी राजकुमारी से विवाह नहीं कर सकते हैं ? आपस में लड़कर अपनी शक्ति कम करने से कोई लाभ तो निकलेगा नहीं।' राजकुमारी ने झूठ बतला दिया।

मनुष्य—'बात तो तुम्हारी सही है। आदमी बड़े कायदे

के और साहसी मालूम पड़ रहे हो, पर तुम्हें नहीं पता इसमें गढ़मण्डल के राजा का कोई दोष नहीं है ? उन्होंने तो पहले विवाह का प्रस्ताव भेजा ही था, लेकिन तुम्हारे राजा ने नाहीं कर दिया ।'

राजकुमारी—'नाहीं क्यों न करते ? क्या अपने से नीची श्रेणी वाले में शादी करेंगे । राजकुमारी स्वयं तैयार न होंगी ।'

मनुष्य—'तब तुम कुछ भी नहीं जानते । राजकुमारी ने तो गढ़मण्डल के राजा को अपना पति मान लिया है और इस प्रकार का सन्देश वहाँ कहला भी भेजा है ।'

राजकुमारी चकित होकर उसे देखने लगीं । उन्होंने मन में सोचा कि यह बात इस मनुष्य को कैसे मालूम है ? इसमें अवश्य कोई भेद है । वह बड़ी उलझन में पड़ गईं । उन्हें कुछ बोलने में देर लगी, तब तक वह मनुष्य फिर बोल उठा, 'तुम्हें मेरी बातों पर आश्चर्य हो रहा होगा, क्यों ?'

राजकुमारी ने अपने को सम्भाला और झट से कहा, 'बहुत अधिक । यह बात आप को कैसे मालूम हुई ? राजकुमारी ऐसा नहीं कह सकती हैं ।'

मनुष्य—'क्यों नहीं कह सकती हैं । तुम्हें इसकी क्या जानकारी ?'

राजकुमारी—'जानकारी है और अच्छी तरह जानकारी है । मेरी बहन राजकुमारी की मुँहलगी दासियों में है । उससे राजकुमारी कोई बात छिपाती नहीं हैं । अगर कोई ऐसी बात होती तो मेरी बहन को ज़रूर मालूम होती ।' राजकुमारी ने उस मनुष्य को टटोलना चाहा । उसकी सच्चाई जानने का

प्रयत्न किया।

मनुष्य—'निश्चय ही राजकुमारी ने तुम्हारी बहन से यह बात छिपाली है। मैं जो कुछ कह रहा हूँ, बहुत अधिकार के साथ कह रहा हूँ। मेरे एक नातेदार दलपतिशाह के अंगरक्षकों में हैं। मुझे यह बात उन्हीं से मालूम हुई थी और मैं समझता हूँ उनकी बात कभी झूठ नहीं हो सकती है। इतना ही नहीं। सुनने में आया है कि राजा राजकुमारी से मिलने के लिये बड़े व्याकुल हैं। रात में कालिंजर के इधर उधर चक्कर भी लगाते हैं। उनके अभी तक आक्रमण न करने का भी यही कारण है। वह राजकुमारी से एक बार मिल लेने के बाद लड़ाई आरम्भ करेंगे।'

राजकुमारी का आश्चर्य बढ़ता जा रहा था। बड़े विचित्र मनुष्य से भेंट हो गई थी। फिर भी उन्होंने अपने आश्चर्य को दबाते हुए कहा, 'आप को तो बड़ी-बड़ी बातों की जानकारी है। अगर यह सब बातें सही हैं तब तो गढ़मण्डल के राजा के पास जाना मेरा उचित नहीं है। इसमें तो सारी गलती राजकुमारी की है। उन्हें राजा के पास ऐसा सन्देश नहीं भेजना चाहिए था।

मनुष्य—'खैर, अगर तुम चाहो तो एक काम हो सकता है।'

राजकुमारी—'क्या ?'

मनुष्य—'तुम अपनी बहन से कहकर राजकुमारी के मन की बात जानने को कहो और यह भी कहलाओ कि राजा उनसे मिलने के लिये बड़े व्याकुल हैं। अगर मिलना चाहें तो मिल लें। मैं समझता हूँ कि अगर दोनों की भेंट हो गई तो तुम जो जनता की भलाई के लिये जा रहे थे, वह काम हल हो जायेगा।'

राजकुमारी—'क्या राजा यहाँ राजकुमारी से मिलने आ सकते हैं ?'

मनुष्य—'क्यों नहीं आसकते हैं। मैं अपने उन्हीं रिश्तेदार के द्वारा राजा के पास ख़बर भिजवा दूँगा।'

राजकुमारी—'मैं कल सबेरे अपनी बहन से बातें करूँगा। अगर राजकुमारी किसी कारणवश न आसकीं तब भी मेरी बहन उनका सन्देश लेकर आयेंगी। आप महाराज को बुलवाइये। भेंट होने पर कोई न कोई रास्ता निकलेगा ही।'

मनुष्य—'ठीक है।'

राजकुमारी—'तो कल इसी समय आप महाराज को लेकर यहाँ आयेंगे न ?'

मनुष्य—'मैं कैसे आ सकता हूँ ? मुझसे उनका क्या मतलब ? वह अकेले आयेंगे और मेरी राय है कि तुम भी न आना। वैसे राजकुमारी या तुम्हारी बहन संग-संग चलने को कहें तब बात दूसरी है।

राजकुमारी—'नहीं ! मैं नहीं आऊँगा। दिन में किसी समय यह स्थान बहन को दिखला जाऊँगा।'

मनुष्य—'ठीक है। अब मैं चल रहा हूँ।' वह चला गया।

राजकुमारी बहुत कुछ सोचती हुई लौट पड़ीं। उन्हें सन्देह हो रहा था कि कहीं यही दलपतिशाह तो नहीं हैं।

५

दूसरे दिन पता नहीं क्या सोचकर राजकुमारी ने भेष नहीं बदला। वह राजकुमारी के रूप में ही बाहर निकलीं। दुर्ग के द्वार पर आकर उन्होंने द्वारपाल को अलग बुलाकर कहा, 'मेरे बाहर जाने की ख़बर किसी को नहीं मिलनी चाहिये। मैं दो घड़ी रात बीतने पर लौटूँगी।'

द्वारपाल सिर नवाये बोला 'राजकुमारी की आज्ञा का पालन होगा।'

राजकुमारी तेज़ी से निकलती हुई कल वाले रास्ते से उसी स्थान को चल पड़ीं। उन्होंने रास्ते में निश्चय किया कि पहले किसी झाड़ी में छिप कर दलपतिशाह को देखना ठीक होगा। अपने को पहले खोलने की क्या आवश्यकता है ? महाराज कितने व्याकुल हैं, इसे भी तो ज़रा देखें। राजकुमारी ने ऐसा ही किया। वह और जल्दी-जल्दी चलने लगीं। उन्होंने उस स्थान पर पहुँच कर इधर उधर देखा और वहीं पास की झाड़ी में छिप कर बैठ गईं। अभी कल वाला समय नहीं आया था। राजकुमारी प्रतीक्षा करने लगीं।

कुछ समय उपरान्त राजकुमारी को किसी के आने की आहट मिली। वह टकटकी लगाकर देखने लगीं। आने वाला सामने आया। राजकुमारी देख कर भौंचक्की रह गईं। यह तो कल वाले ही व्यक्ति थे। केवल कपड़ों में अन्तर था। कल वह

देहाती कपड़े पहने हुये थे और आज राजाओं जैसे। उनका रूप चाँदनी में खिल उठा था। तो यही दलपतिशाह हैं। राजकुमारी साँस रोके उन्हें निहारने लगी थीं।

राजकुमारी को अब सामने जाने में लज्जा आने लगी थी। उन्होंने चुपके से निकल भागने को सोचा। उनकी जो इच्छा थी वह पूरी हो गई थी। परन्तु मन ने कहा कि यह अनुचित है, महाराज को धोखा देना ठीक नहीं है। जब मैंने उन्हें देख लिया है तो अपने को भी दिखाना आवश्यक है। न मालूम कैसी-कैसी कल्पनाएं उन्होंने मेरे विषय में बना रखी होंगी। बात करने में कोई बुराई नहीं है। यह सोचकर राजकुमारी झाड़ी से निकलीं। खड़खड़ाहट हुई। टहलते हुये दलपतिशाह ने मुड़कर देखा और कहा, 'कौन ?'

राजकुमारी ने सामने आकर पूछा, 'मैं महाराज के सामने खड़ी हूँ न ?'

दलपतिशाह बड़े ध्यान से राजकुमारी को देखने लगे। उनकी सुन्दरता राजा की आँखों में चकाचौंध उत्पन्न कर रही थी। उन्होंने भी पूछा, 'मैं भी राजकुमारी दुर्गावती के सामने खड़ा हूँ न ?'

राजकुमारी ने धीरे से कहा, 'हाँ। कल महाराज ने धोखा क्यों दिया ?'

दलपतिशाह मुस्करा कर बोले, 'और अगर यही प्रश्न मैं राजकुमारी से करूँ तो ?'

राजकुमारी—'पहले महाराज को उत्तर देना है उसके बाद प्रश्न हो सकता है। पहले कर्तव्य निभाया जाता है तब

राजकुमारी भेंट के लिये उसी स्थान पर आईं। वह हैरान हो गईं कि कल वाला किसान-व्यक्ति स्वयं उसके प्रेमी महाराज दलपतिशाह हैं।

अधिकार की इच्छा की जाती है ।'

दलपतिशाह—'कर्त्तव्य तो कई रातों से कर रहा हूँ। पूरी पूरी रात कालिंजर की धूल छानने और राजकुमारी से भेंट करने के चक्कर में गुज़ारी है। अब जब भाग्य ने वह दिन दिखाया है तो अधिकार का उपयोग क्यों न करूँ? क्या राजकुमारी मुझे इतनी छूट नहीं दे सकती हैं ?'

राजकुमारी मुस्कराईं। दलपतिशाह ने फिर कहा, 'मैं आक्रमण करने से पहले तुम से दो बातों का वचन लेना चाहता था। और इसी कारण तुम से मिलने के लिये इतना परेशान था। तुम इसे भलीभांति समझ लो कि अब तुम्हारे बिना मैं जीवन का कोई मूल्य नहीं समझता हूँ। इसलिये पहला वचन यह चाहता हूँ कि तुम किसी भी दशा में आत्महत्या नहीं करोगी और दूसरा वचन चाहता हूँ तुमसे विवाह का। मेरे युद्ध में विजयी होने पर तुम्हें पिता का साथ न देकर मेरा साथ देना होगा। बोलो तैयार हो ? अगर न तैयार हो तो मैं भी सब छोड़कर शेष जीवन पहाड़ों पर जाकर बिताऊँगा।'

राजकुमारी ने मुँह से कुछ नहीं कहा पर सिर हिलाकर वचन दे दिया और फिर बोलीं, 'अब मैं जाने की आज्ञा चाहूँगी।'

दलपतिशाह ने आज्ञा दे दी। राजकुमारी चली गईं। दलपतिशाह अपने पड़ाव को लौट पड़े।

× × ×

दूसरे दिन लड़ाई का नगाड़ा बज उठा। दलपतिशाह ने सेना को आदेश दिया। सैनिक गरजते हुये चल पड़े। उधर

दोनों ओर की सेनायें जूझ गईं। भाले चलने लगे। तड़ातड़ तलवारें टकराने लगीं।

कीर्तिराय भी तैयार थे । उनका भी आदेश हुआ । दोनों ओर की सेनायें जूझ गईं । भाले चलने लगे । तड़ातड़ तलवारें टकराने लगीं । सिर कटने लगे । लाशें गिरने लगीं, खून की नदी बह उठी । दोपहर हो गई । दोनों सेनायें उसी प्रकार आमने सामने लड़ती रहीं । दलपतिशाह अपने सैनिकों को ललकारते हुये आगे आये । सेना में उत्साह बढ़ गया । फिर क्या था, भयंकर युद्ध होने लगा । कीर्तिराय के सैनिकों के पैर उखड़ने लगे । वे पीछे हटने लगे । कीर्तिराय ने भी उन्हें हिम्मत दिलाई पर वे दलपतिशाह के सैनिकों के सामने टिक न सके और थोड़े समय बाद भाग खड़े हुये । चारों ओर भगदड़ मच गई । कीर्तिराय ने भी अपनी जान बचाई और दुर्ग में घुसकर दुर्ग के द्वार को बन्द करा दिया । विजयी दलपतिशाह ने दुर्ग का घेरा डाल दिया ।

अब दलपतिशाह दुर्ग पर अधिकार जमाने का प्रयत्न करने लगे । कई दिन बीत गये परन्तु दुर्ग पर उनका अधिकार न हो सका । अचानक एक रात उन्हें एक उपाय सूझ गया । वह उठे । अपनी रावटी से बाहर आये । और कुछ चुने हुये सैनिकों को लेकर दुर्ग के पीछे उस स्थान पर जा पहुँचे जहाँ से दुर्ग का पानी नाले द्वारा बाहर निकला करता था । उन्होंने एक सैनिक के कंधे पर हाथ रखते हुये धीरे से कहा, 'इस नाले में लगे हुये छड़ों को देख रहे हो ?'

सैनिक ने उत्तर दिया, 'जी महाराज !'

राजा—'अगर काफी नीचे तक डुबकी लगाकर उधर निकलने का प्रयत्न किया जाय तो निकला जा सकता है न ?'

सैनिक—'जी हाँ। बहुत आसानी से।'

राजा—'तो मैं डुबकी लगाकर अन्दर जाता हूँ। तुम लोग मेरे पीछे-पीछे आओ।'

सैनिक ने राजा का हाथ पकड़ लिया और बोला, 'आप नहीं महाराज। यह इतना कठिन काम नहीं है। इसे हम लोग भी कर सकते हैं। आप हुक्म दें कि अन्दर जाकर हम लोगों को करना क्या होगा?'

राजा—'तुम्हें किसी तरह दुर्ग के पिछले द्वार पर पहुँच कर द्वार खोल देना है। वहाँ मैं सैनिकों के साथ छिपा हुआ तैयार रहूँगा। सेना अन्दर प्रवेश कर जायेगी। दुर्ग अधिकार में आ जायेगा। लेकिन बहुत चतुराई से काम करने की आवश्यकता है।'

सैनिक—'महाराज, चिन्ता न करें। भगवान चाहेंगे तो अभी घड़ी दो घड़ी के भीतर दुर्ग पर महाराज का झंडा फह-राने लगेगा। आप जाकर तैयारी करें।' सैनिक नाले में उतरा और उसके पीछे एक-एक करके लगभग आठ सैनिक और उतरे। सब गोता लगाते हुये दुर्ग के अन्दर जा पहुँचे।

दलपतिशाह लम्बे डग रखते हुये पड़ाव पर आये। सेना-नायकों को बुलवाया और उन्हें सारी बातें समझाकर चलने का आदेश दिया। सेना तैयार हो गई। राजा ने हथियार बाँधे और द्वार की ओर चल पड़े। समीप पहुँच कर द्वार खुलने की प्रतीक्षा करने लगे। सैनिक इधर-उधर फैल कर मौन बैठ गये थे।

प्रतीक्षा करते हुये बहुत समय नहीं बीता होगा कि अन्दर

हल्ला सुनाई पड़ा और खट से द्वार खुल गया। दलपतिशाह सेना सहित दुर्ग में घुस गये। दुर्ग में खलबली मच गई। सब इधर-उधर भागने लगे। जो थोड़े बहुत सैनिक सामने आये वे मारे गये। कीर्तिराय ने अन्दर शोर सुनते ही समझ लिया कि दुर्ग के अन्दर वैरी घुस आये हैं। उन्होंने अपनी तलवार संभाली और कमरे से बाहर निकलने को हुये कि उनकी पत्नी उनसे चिपट गई। तब तक दुर्गावती भी आ गई। पत्नी और पुत्री ने उन्हें जाने नहीं दिया। कीर्तिराय बाहर न निकल सके।

दुर्ग पर दलपतिशाह का अधिकार स्थापित हो गया। और उनके सैनिक हर जगह तैनात हो गये। कीर्तिराय के सैनिक बन्दी बना लिये गये। सवेरा होते होते दुर्ग का सारा प्रबन्ध दलपतिशाह के हाथ में आ गया। दिन चढ़ने पर दलपतिशाह अपने पड़ाव पर चले आये।

दोपहर बाद दलपतिशाह अपने मंत्री अधारसिंह सहित कीर्तिराय से मिलने आये। कीर्तिराय को सूचना दी गई। कीर्तिराय सूचना लाने वाले के मुँह को देखते रह गये। उन्हें अपने कानों पर जैसे विश्वास नहीं हो रहा था। उन्होंने सोचा वास्तव में दलपतिशाह वीर और योग्य हैं। वह अब भी मुझे बड़ा समझते हैं। यह उनकी कितनी बड़ी उदारता है, कीर्तिराय का मन भर आया। दलपतिशाह के इस व्यवहार ने उन पर बहुत अच्छा असर डाला। वह कमरे से निकलकर बाहर आये और बड़े आदर सहित दोनों व्यक्तियों को लिवा लाये।

दलपतिशाह समझ गये कि उनके आने का प्रभाव कीर्तिराय पर अच्छा पड़ा है। उन्होंने बड़े नम्र शब्दों में कहा

मैं अपनी नासमझी के लिए क्षमा माँगने आया हूँ। मैंने जोश में आकर आक्रमण कर दिया था। मुझे बड़ा दुख है। मैं सवेरे कालिंजर छोड़कर चला जाऊँगा। आप राजकुमारी का विवाह जिससे उचित समझें कर दें।। मैं सारा जीवन अविवाहित रहकर बिता दूँगा।'

जो कुछ कीर्तिराय के भीतर क्रोध शेष रह गया था, वह भी समाप्त हो गया। उन्होंने उठकर दलपतिशाह को कंठ से लगा लिया। उनकी आँखें भर आईं। वह बोले, 'नासमझी तो मैंने की है बेटा! तुम्हारे जैसा योग्य वर मेरी पुत्री को कहाँ मिल सकता है? मेरी आंखों पर ऊँच-नीच का पड़ा हुआ पर्दा अब फट गया है। मुझे बहुत दुःख है।' कीर्तिराय अपनी आँखें पोंछने लगे।

क्षणभर मौन रहने के बाद कीर्तिराय पुनः बोले, 'अधारसिंह जी, राजगुरू से साइत विचरवाकर विवाह की तैयारी कीजिये। शुभ काम में देरी नहीं होनी चाहिये।'

'महाराज की आज्ञा सिर पर। कल से तैयारी शुरू हो जायेगी।'

तैयारी होने लगी और साइत के अनुसार बड़ी धूमधाम से राजकुमारी दुर्गावती का विवाह राजा दलपतिशाह के संग हो गया। दुर्गावती रानी बनकर गढ़मण्डल आई। राजधानी के लोगों की खुशी का ठिकाना न रहा। महीनों नाच-रंग और खेल-तमाशे होते रहे। पूरे राज्य भर में प्रसन्नता छा गई। भगवान की कृपा से दलपतिशाह और दुर्गावती की मन्शा पूरी हुई। उन्हें महान आनन्द था।

इस प्रकार राजा-रानी सुख के साथ जीवन व्यतीत करने लगे। दोनों एक दूसरे के सुख में सुख और दुःख में दुःख समझने लगे। दुर्गावती अपने पति के कामों में हाथ बँटाकर हर तरह का सहयोग देने लगीं। पति को अधिक से अधिक सुख देकर अपने कर्त्तव्यों का पालन करने लगीं। इतना ही नहीं राज्य सम्बन्धी कार्यों में भी वह ध्यान देतीं और दलपतिशाह को समय समय पर सलाह दिया करतीं। दलपतिशाह उन्हीं की राय के अनुसार काम करते क्योंकि उनकी सूझ-बूझ बहुत अच्छी थी। राजा दिन पर दिन रानी की ओर आकर्षित होते गये। उन्होंने अनुभव किया कि अवसर पड़ने पर दुर्गावती शासन का प्रबन्ध भी भलीभांति संभाल सकती हैं। वह अपनी पत्नी के गुणों पर मन ही मन बड़े प्रसन्न होते।

समय गुज़रता गया। रानी गर्भवती हुई और भगवान की

कृपा से समय आने पर उन्होंने पुत्र-रत्न को जन्म दिया। दलपतिशाह आनन्द से नाच उठे। राजधानी और राज्य के कोने कोने में घी के दीये जलाये गये। मन्दिरों और मस्जिदों में प्रार्थनायें हुईं। राजकुमार सौ वर्ष जीयें, यही सबने विनती की। हफ्तों गोंडवाना-राज्य में जलसे होते रहे। दलपतिशाह ने दीन-दु:खियों को हाथ खोल कर दान दिये। चारों ओर हंसी-खुशी थी। राजकुमार का नाम वीरनारायण रखा गया।

मनुष्य सोचता है कुछ और, पर हो जाता है कुछ और। ईश्वर की लीला बड़ी विचित्र है। कब क्या हो सकता है, कुछ कहा नहीं जा सकता। अचानक एक दिन शिकार से लौटने पर राजा को ज्वर आ गया और धीरे-धीरे वह ज्वर बढ़ता ही गया। दवाइयों का कोई असर नहीं हो रहा था। दुर्गावती की चिन्ता बढ़ गई। दूसरे स्थानों के भी प्रसिद्ध वैद्य और हकीम बुलाये गये। पर बुखार में कोई परिवर्तन नहीं आया। दिन पर दिन उनकी दशा बिगड़ती ही गई।

एक दिन राजा ने दुर्गावती को पास बिठलाकर कहा, 'रानी, ईश्वर की शक्ति के आगे किसी की शक्ति नहीं चलती है। मेरा समय अब आ गया है। दवाईयाँ अब मुझे बचा नहीं सकती हैं। उसकी अगर यही मर्ज़ी है तो फिर कौन चारा है?'

रानी उनके मुँह पर अपना हाथ रखकर रो उठीं, 'ऐसा न कहिये महाराज। मुझे आप छोड़कर नहीं जा सकते।' वह उनके सीने से चिपटकर फफक-फफक कर रोने लगीं।

राजा उनके सिर पर हाथ फेरते हुए बोले, 'मरना जीना अपने हाथ में नहीं है न रानी। इसे ईश्वर करता है और जो

ईश्वर करता है सब ठीक करता है। इसी पर विश्वास करो और अपने को संभालो। अगर तुमने अपना धीरज छोड़ दिया तो वीरनारायण का क्या होगा? अब तो माता के संग-संग पिता वाली ज़िम्मेदारियों को भी तुम्हीं को निभाना है न।'

रानी—'मैं नहीं निभाऊँगी नाथ। मैं किसी भी दशा में आपका साथ नहीं छोड़ सकती। मुझे आप अपने चरणों से अलग न कीजिये। मैं आपके बिना जीवित नहीं रह सकती।' रानी फूट-फूट कर रोने लगीं।

राजा की भी आँखों में आँसू आ गये, परन्तु उन्होंने अपने को संभाला और कुछ देर बाद उसी प्रकार ढाढ़स देते हुए बोले, 'रानी, मैं कब चाहूँगा कि तुम मुझसे बिछुड़ जाओ, पर हमें अब वीरनरायण का भी तो ध्यान रखना है। अपनी खुशी के लिये क्या उसका जीवन नष्ट करना उचित होगा? अब तुम्हारे लिए पहला कर्त्तव्य है उसका लालन-पालन करते हुए इस राज्य की देखभाल करना और जिस दिन वह इस योग्य हो जाय उस दिन तुम मेरे पास आ जाना। मैं स्वर्ग में भी तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहूँगा। मेरी आत्मा तुम्हें भूल नहीं सकती है।'

रानी उसी प्रकार रोती हुई बोलीं, 'मुझसे यह नहीं हो सकता नाथ! मैं आपके संग-संग चलूँगी। मैं सती हो जाऊँगी, मुझे आप ठुकराइये नहीं।'

राजा को चुप हो जाना पड़ा। उन्होंने इस समय कुछ और कहना उचित न समझा। रानी उठकर दूसरे कमरे में चली गईं और बहुत समय तक रोती रहीं।

दूसरे दिन राजा की दशा अधिक खराब हो गई और तीसरे

दिन और भी अधिक खराब हो गई। राजा ने समझ लिया कि अब वह दो-चार घंटे के ही मेहमान हैं। दुर्गावती पलंग के पास खड़ीं आँसू बहा रही थीं। राजा ने करवट ली, उन्हें पलंग पर बैठने का संकेत किया। वह बैठ गईं। राजा ने वीरनारायण को बुलवाया। दासी गई और तीन वर्षीय राजकुमार को उठा लाई। राजा ने दुर्गावती से उसे गोद में बिठलाने को कहा। दुर्गावती ने उसे गोद में ले लिया। दलपतिशाह कुछ समय राजकुमार को निहारते रहे। उसके बाद दुर्गावती के हाथ को पकड़ कर बालक के सिर पर रखते हुए बहुत धीमी आवाज़ में बोले, 'तुम्हें इसकी सौगन्ध है कि मेरे मरने के बाद सती न होकर इसका लालन पालन करोगी। खाओ सौगन्ध।'

रानी की आँखों से आँसू और तेज़ी से गिरने लगे। वह चुप रहीं। शायद वह कसम खाने को तैयार नहीं थीं।

राजा पुनः बोले, 'रानी मेरी आत्मा को बहुत कष्ट पहुँचेगा। अगर तुमने मुझे यह वचन नहीं दिया तो फिर मैं शान्ति से नहीं मर पाऊँगा। अब समय बहुत कम है। मेरी यह विनती स्वीकार करो रानी!' राजा की आवाज़ रुकने लगी थी।

दुर्गावती फूट पड़ीं। उन्हें अब विवश हो जाना पड़ा। उन्होंने सिर हिलाते हुए पति की बातों को स्वीकार किया। राजा ने संतोष की साँस ली और सामने खड़ी दासी को संकेत से बुलाते हुए धीरे से कहा—'अधारसिंह।'

अधारसिंह और राज्य के दूसरे बड़े सरदार बाहर खड़े थे। दासी ने मन्त्री से अन्दर चलने के लिये कहा। वृद्ध मंत्री

आँखें पोंछते हुए कमरे में आये। दलपतिशाह क्षणभर तक टकटकी लगाये उन्हें देखते रहे, तब बोले, 'भगवान की यही इच्छा थी अधारसिंह जी। अब इन्हें संभालियेगा। यही प्रार्थना है।' उन्होंने बड़ी कठिनाई से अपने हाथ जोड़े।

अधारसिंह बिलख उठे, 'ऐसा न कहिये महाराज!' दलपतिशाह की आँखें बन्द होने लगीं और दोनों हाथ अलग

राजा ने समझ लिया कि अब वह दो चार घंटे के ही मेहमान हैं। दुर्गावती पलंग के पास खड़ी आंसू बहा रही थीं। राजा ने वीरनारायण को बुलवाया। दासी गई और तीन वर्षीय राजकुमार को उठा लाई।

होकर पलंग पर गिर पड़े । प्राण निकल गये। जीवन-दीप बुझ गया । दुर्गावती हाहाकार कर उठीं । अधारसिंह बच्चों की भाँति रोने लगे। दासी राजकुमार को गोद में उठाकर बाहर चली गईं । मृत्यु का समाचार मिलते ही महल के बाहर हज़ारों की संख्या में खड़े नर-नारी अपना सिर धुनने लगे ।

७।

महीनों शोक का वातावरण फैला रहा। दुर्गावती सूख कर पीली पड़ गईं। उन्होंने खाना-पीना सब छोड़ दिया था। पर उनके चाहने से उनकी मौत थोड़े हो सकती थी। अधारसिंह रानी की यह दशा देखकर बड़े दुःखी हो रहे थे लेकिन रानी को समझाने के सिवा उनके पास चारा क्या था ? वह रोज़ समझाते। उन्हें ढाढ़स देते। कर्त्तव्यों की याद दिलाते और अन्त में उनसे हठ छोड़ने की विनती करते। बुड्ढे मंत्री की बातों ने धीरे-धीरे रानी पर असर डाला। उनके विचारों में कुछ परिवर्तन आया। वह खाने-पीने लगीं। कुछ सोचने लगीं। अधारसिंह को प्रसन्नता हुई। उन्होंने मन ही मन ईश्वर को बार-बार धन्यवाद दिया।

रानी ने अपने पति को दिये हुये वचन को निभाने का निश्चय किया। उन्होंने सोचा कि उनका खाना-पीना छोड़ना बड़ा अनुचित था। उन्हें अपने कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिये। यही उनका धर्म है। फलस्वरूप वह अधारसिंह से राज-काज के सम्बन्ध में बात-चीत करने लगीं। अधारसिंह एक एक चीज़ बताने लगे और विस्तार सहित बताने लगे। रानी सब सुनतीं और उन पर विचार करतीं। ज्यों-ज्यों रानी का स्वास्थ्य सुधरता गया त्यों-त्यों वह राज्य के कामों में अपने को अधिक उलझाने लगीं।

शासन ठीक तरह से चले इसके लिये आवश्यक था कि सिंहासन पर राजकुमार को बिठला दिया जाय। इसलिए बड़ी धूम-धाम और तड़क-भड़क के साथ राजकुमार वीरनारायण सिंहासन पर बिठलाये गये और गोंडवाना राज्य के राजा घोषित हुए। राजकुमार अभी बालक थे, इस कारण माता दुर्गावती संरक्षिका बनीं और राज्य की बागडोर उनके हाथ सौंप दी गई। दरबार राजमाता दुर्गावती और वीरनारायण की जय-जयकार से गूँज उठा। सब प्रसन्न थे। फिर से वही हँसी-खुशी वाला वातावरण फैल गया। दुर्गावती पुत्र को गोद में बिठाये सिंहासन पर बैठी थीं।

दुर्गावती न तो वीरता में कम थीं, न साहस में और न बुद्धि में। इस कारण राज्य में सुन्दर प्रबन्ध होना कोई कठिन नहीं था। उन्होंने जो पहला काम किया था वह मंत्री अधार-सिंह के साथ पूरे राज्य का दौरा करना। दौरा करने से उन्हें अपनी प्रजा और देश के विषय में पूरी-पूरी जानकारी हो गई। उन्होंने किसानों को अधिक छूट दी। लगान माफ किए। पैदावार बढ़ाने के लिये राज्य की ओर से हर तरह की सहा-यता दिलवाई और इस तरह सुख और सम्पत्ति की बढ़ती की।

जब किसी देश में सुख और सम्पत्ति बढ़ती है, वह देश अपने को अधिक मज़बूत बनाने का भी प्रयत्न करने लगता है। जब गोंडवाना की उन्नति होने लगी और वह धन दौलत से भरने लगा तब दुर्गावती ने सेना की ओर ध्यान दिया। वह स्वयं घोड़े पर चढ़कर परेड देखने लगीं और सेना का निरीक्षण करने लगीं। धीरे-धीरे सैनिकों की संख्या बढ़ने लगी और वह बीस हज़ार तक

पहुँच गई। एक हज़ार हाथी हो गये। इतनी बड़ी सेना गोंड-वाना में कभी नहीं रही थी। रानी ने अपने परिश्रम से राज्य को मज़बूत बनाकर ऊँचा उठा दिया। उनकी शक्ति से दूसरे राज्य डरने लगे। उनका आतंक चारों ओर फैल गया। उनकी बुद्धि और वीरता की प्रशंसा होने लगी। उनका नाम घर.घर में लिया जाने लगा। दिन पर दिन गोंडवाना की उन्नति होती गई। दुर्गावती इसी लगन से काम करती गईं। सुख और शान्ति से समय बीतता गया। जनता जयजयकार करती रही। रानी की उम्र सौ वर्ष की हो इसके लिये ईश्वर से प्रार्थना करती रही।

× × ×

यद्यपि इस समय हिन्दुस्तान का सम्राट् अकबर था फिर भी अभी देश पूर्णरूप से उसके आधीन नहीं हो पाया था। अकबर की इच्छायें बहुत थीं। वह महान् बनना चाहता था और महान् बनने के लिए आवश्यक था कि देश के एक-एक भाग पर उसके अधिकार की मोहर लग जाय। बड़ी से बड़ी और छोटी से छोटी सारी शक्तियाँ उसके अधिकार को मानें। उसकी आज्ञा का पालन करें। अपने इसी स्वार्थ की सिद्धि के लिए वह बिना उचित और अनुचित का विचार किये एक के बाद एक उन राजाओं और सरदारों को रौंदने लगा जो बिल्कुल निर्दोष थे और किसी भी तरह का अकबर से बैर रखने वाले नहीं थे। पर उसके सामने बेकसूर और भले का सवाल तो था नहीं। उसे तो महान् बनना था। पूरे भारतवर्ष में उसी की तूती बोले, और सभी उसके दास हों, यही उसकी केवल इच्छा थी।

अकबर की विशाल सेना एक-एक करके रौंदने लगी।

अजमेर, जौनपुर, ग्वालियर, मालवा सब रौंद डाले गये। सभी ने उसकी दासता स्वीकार की। फिर बारी आई मेर्था के शासक जयमल की। मेर्था का प्रसिद्ध दुर्ग अपनी दृढ़ता के लिये विख्यात था परन्तु महाबली अकबर की विशाल सेना का वह कहाँ तक सामना करता ? अन्त में दुर्ग पर अधिकार हो गया। जयमल ने भी अकबर की सत्ता स्वीकार कर ली।

दिल्ली में सम्राट् अकबर विजय की खुशी में कोई उत्सव मना रहा था, जिसमें सारे प्रान्तों के गवर्नर और साम्राज्य के ऊँचे पदाधिकारी भी बुलाये गये थे। कड़ा का गवर्नर आसफखाँ भी आया हुआ था। उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। उत्सव समाप्त होने पर एक रात को आसफखाँ अकबर के निजी कमरे में हाज़िर किया गया। कमरे में इन दोनों के अतिरिक्त और कोई नहीं था। अकबर ने बैठने के लिये कहा। आसफखाँ बैठ गया। कुछ मिन्टों तक सोचते रहने के बाद अकबर बोला, 'मैंने तुम्हें इस वक्त एक खास सलाह के लिये बुलाया है। क्या तुम्हें गोंडवाना के बारे में किसी तरह की कोई जानकारी है ?'

आसफखाँ—'जहाँपनाह मेरी बदतमीज़ी माफ करें। मेरा ख्याल है कि अगर गोंडवाना को अपने अधिकार में न किया गया तो एक दिन इसकी रानी जहाँपनाह के सिर का दर्द बन जायेगी।'

अकबर ने अचम्भा प्रगट किया, 'क्या ?'

आसफखाँ—'जी हाँ गरीबपरवर। दलपतिशाह के मरने के बाद उसकी रानी दुर्गावती ने हुकूमत की बागडोर संभाल कर उसमें बड़ा परिवर्तन ला दिया है। उसकी ताकत बढ़ गई है

ग्रौर उसे दिन पर दिन बढ़ाती ही चली जा रही है। उसके पास बहुत बड़ी फौज है।'

ग्रकबर, ग्रासफखाँ की बात सुनकर दंग रह गया ग्रौर बोला, 'ग्रौरत होकर इतनी होशियार ग्रौर बहादुर ! खैर, तुम गोंडवाना के बारे में पूरी जानकारी हासिल करने की कोशिश करो। मैं बहुत जल्द उसकी ऐंठ खत्म करने को सोच रहा हूँ।'

जहांपनाह मेरी बदतमीज़ी माफ करें। मेरा ख्याल है कि ग्रगर गोंडवाना को ग्रपने ग्रधिकार में न किया गया तो एक दिन इसकी रानी जहांपनाह के सिर का दर्द बन जायेगी।

आसफखाँ—'जहाँपनाह का ख्याल सही है। ऐसा होना बहुत जरूरी है।'

अकबर कुछ सोचता रहा फिर बोला, 'लेकिन मैं समझता हूँ कि यह सब करने में दुर्गावती के मन्त्री अधारसिंह का हाथ होगा। मैंने सुना है, वह बहुत काबिल और दूर की सूझबूझ रखने वाला इन्सान है?,

आसफखाँ—'जहाँपनाह ने सही सुना है। वह दाहिना हाथ है। गोंडवाना की ऐसी तरक्की उसी की मेहनत की देन है।'

अकबर ने 'हूँ' किया और फिर उसे जाने का आदेश देकर कमरे में टहलने लगा। वह कुछ सोचने लगा था। आसफखाँ सिर झुकाकर तीन बार सलाम करता हुआ कमरे से बाहर हो गया।

दूसरे दिन आसफखाँ ने सम्राट् से आज्ञा ली और वह कड़ा को चल पड़ा।

●

८

अकबर गोंडवाना को हड़पने का उपाय सोचने लगा। गोंडवाना-राज्य इतना शक्तिशाली बन गया होगा उसे आशा नहीं थी। वह इसको एक साधारण राज्य समझता था। उसकी चिन्ता बढ़ गई थी। अब शीघ्र से शीघ्र रानी दुर्गावती को कुचल कर गोंडवाना अपने अधिकार में कर लेना उसके लिये आवश्यक हो गया था। उसे यह चिन्ता बिल्कुल नहीं थी कि एक बेकसूर औरत के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करने पर संसार क्या कहेगा ? उसे अपने स्वार्थ के आगे मनुष्यता, भले-बुरे का और ईमानदारी-बेइमानी का कुछ भी ध्यान नहीं रह गया था। वह किसी को भी आज़ाद नहीं रहने देना चाहता था। सब को गुलाम बनाकर अपने को महान् बनाना चाहता था। दो-चार दिनों तक वह इस प्रश्न पर सोचता रहा। अन्त में उसे एक तरकीब सूझ गई।

अकबर ने एक पत्र रानी दुर्गावती को भेजा जिसमें उसने अधारसिंह को दिल्ली बुलवाया था। रानी ने अधारसिंह को पत्र दिखलाया। अधारसिंह पत्र पढ़कर सोचने लगे और कुछ देर बाद बोले, 'अकबर के बुलाने का कोई कारण नहीं समझ में आ रहा है, रानीजी।'

रानी—'मैं भी नहीं समझ पा रही हूँ मंत्री महोदय ! पर जहाँ तक मेरा अनुमान है, गोंडवाना के सम्बन्ध में ही कोई

बातचीत होगी। यह राज्य अकबर की आखों में खटकने लगा है।

अधारसिंह—'हाँ, यह सम्भव हो सकता है। पर मुझे बुलाने से उसका क्या मतलब निकलेगा ? क्या मुझे वह फोड़ना चाहता है ?'

रानी—'हो सकता है। उसने सोचा होगा कि आपको फोड़ देने पर फिर गोंडवाना को फोड़ने में कितनी देर लगेगी ?'

अधारसिंह सोचने लगे। रानी भी सोच में पड़ गईं। एक नई मुसीबत सामने आ गई थी। काफी देर बाद अधारसिंह बोले, 'खैर, दिल्ली तो जाना ही पड़ेगा। अपनी तरफ से किसी प्रकार का अवसर क्यों दिया जाय ? कल मैं चला जाऊँगा। आप किसी प्रकार की चिन्ता न करें। जीवन-भर नमक खाने के बाद बुढ़ापे में नमकहरामी नहीं होगी। जिस मिट्टी में जन्मा हूँ अगर उस मिट्टी के लिये जान भी चली जायेगी तो सौभाग्य समझूँगा।'

रानी—'इसे कहने की आवश्यकता नहीं है मंत्री महोदय, मुझे पूरा विश्वास है। वैसे ईश्वर की जो मर्ज़ी होगी, सो होकर रहेगी। हाँ, इतना आप अवश्य समझ लें कि मैं किसी भी दशा में अकबर के सामने घुटने नहीं टेकूँगी। आवश्यकता पड़े तो आप अकबर से साफ साफ कह सकते हैं।'

अधारसिंह ने सिर नवा कर रानी के आदेश को स्वीकार किया और प्रणाम करते हुये खड़े हो गये।

रानी उन्हें दरवाज़े तक छोड़ने आईं और प्रणाम करती हुई बोलीं, 'अगर कोई उलझन की स्थिति आ जाय तो मुझे शीघ्र सूचना देने का कष्ट कीजिएगा। विलम्ब न होने पाये।'

'ऐसा ही होगा।' कहकर उन्होंने पुनः प्रणाम किया और मुड़ गये।

दूसरे दिन अधारसिंह ने दिल्ली को प्रस्थान किया और हफ्तों की यात्रा के बाद सकुशल दिल्ली पहुँच गये। वहाँ उनका उचित स्वागत-सत्कार हुआ। वह सम्राट् के अतिथि-गृह में ठहराये गये। लगभग एक सप्ताह बाद उनकी भेंट सम्राट् अकबर से हुई। कमरे में अकबर के सिवा और कोई नहीं था। अधारसिंह ने बड़े कमरे में प्रवेश करते ही झुक कर सलाम किया। अकबर ने बड़े मीठे शब्दों में कहा, 'आइये अधारसिंह जी। सफर में किसी तरह की तकलीफ तो नहीं हुई ?'

अधारसिंह ने सिर नवाये उत्तर दिया, 'जी नहीं गरीब-परवर। बहुत अच्छी तरह से आया हूँ।'

अकबर—'रानीजी और राजकुमार तो सकुशल हैं ?'

अधारसिंह—'जी हाँ। आपकी कृपा है।'

अकबर—'बैठिये। मुझे अफसोस है कि आपको इस उम्र में दिल्ली बुलाकर इतनी लम्बी यात्रा करने के लिये मजबूर किया लेकिन क्या करता, बात ऐसी ही थी। बिना आपके आये कुछ हो नहीं सकता था।'

अधारसिंह कुर्सी पर बैठ गये और शिष्ट शब्दों में बोले, 'यह तो मेरा सौभाग्य है जहाँपनाह ! इसी बहाने आज हिन्दुस्तान के सम्राट् के इतने समीप पहुँच कर दर्शन तो कर सका हूँ वरना यह तो विरलों को नसीब होता है। गरीबपरवर ने मुझे कैसे याद किया है ?'

चतुर अकबर ने बड़ी चतुराई से कहा, 'इस वक्त हिन्दुस्तान

की जो हालत है, उसे देखते हुए बहुत ज़रूरी है कि मैं उन सभी छोटी बड़ी ताकतों को, जो किसी भी समय मेरे खिलाफ भड़क सकती हैं, कुचल देना चाहता हूँ। और ऐसा कर भी रहा हूँ। आपको इसकी जानकारी होगी भी।'

'जी गरीबपरवर। अच्छी तरह से।'

अकबर मखमली तकियों के सहारे तनिक लेट गया और बोला, 'मेरे मन्त्रियों ने गोंडवाना का भी ज़िक्र किया था। उनकी राय है कि इसी लपेटे में यह काम भी खत्म हो जाय क्योंकि उन्हें रानी पर बिल्कुल भरोसा नहीं है। उनका कहना है कि रानी मुसलमानों से घृणा करती हैं। साथ ही इस कोशिश में हैं कि किसी तरह ताकत बढ़ाकर मेरे खिलाफ लड़ाई छेड़ दें। उन्हें ....।'

अधारसिंह बीच में बोल पड़े, 'जहाँपनाह मेरी बेअदबी माफ हो। मैंने बीच में बात काटने का साहस इसलिए किया है कि रानी दुर्गावती के बारे में मंत्रियों का विचार झूठ और मनगढ़न्त है। गोंडवाने में हिन्दू मुसलमान भाई-भाई की तरह रहते हैं। रानी दोनों को एक नज़र से देखती हैं और एक जैसा बर्ताव करती हैं। उन्होंने कभी भेद-भाव नहीं बरता है और यही कारण है कि वहाँ ....।'

अकबर ने टोका 'ऐसा भी हो सकता है। आप की बात को मैं गलत नहीं कहता। इसीलिए मैंने अपने मंत्रियों का मुँह यह कहकर बन्द कर दिया कि जब तक वहाँ अधारसिंहजी हैं हमें किसी तरह की चिन्ता नहीं करनी चाहिये। क्योंकि एक बार अब्दुररहीम खानखाना के मुँह से आपकी बड़ी तारीफ सुनी थी।

इन्हींसे मुझे यह भी मालूम हुआ था कि दलपतिशाह के मरने के बाद गोंडवाना को संभाल कर आगे बढ़ाने की सारी मेहनत आपकी है। यही वजह है कि जब इधर गोंडवाना के खिलाफ बातें चलने लगीं, तो मैंने आपको बुलाकर कुछ अपनी राय देने को सोचा।' अकबर की बातों में कूट-कूट कर चालाकी भरी हुई थी।

अधारसिंह अकबर की धूर्तता भरी बातों को समझते हुए भी नासमझ-जैसे बोले, 'जहाँपनाह ने मेरे जैसे साधारण मनुष्य को भी इतना महत्त्व दे रखा है, यह मेरे भाग्य की बात है। गरीबपरवर जो भी आदेश देंगे उसका पालन होगा। रानी जी ने भी चलते समय मुझसे बार-बार यही कहा था। वह स्वप्न में भी जहाँपनाह के विरुद्ध कुछ सोचने का साहस नहीं कर सकती हैं। मन्त्रियों ने गरीबपरवर को सब झूठ बतलाया है।'

अकबर—'आपकी बातों पर अधारसिंहजी मुझे भरोसा है। रानी दुर्गावती मुगल साम्राज्य के प्रति इतनी वफादार हैं—सुनकर प्रसन्नता हुई। वैसे अधारसिंहजी अब उनकी क्या उम्र होगी?'

अधारसिंह—'लगभग अट्ठाईस तीस की।'

अकबर—'और राजकुमार की?'

अधारसिंह—कोई चौदह पन्द्रह साल।'

अकबर—'राजकुमार की संरक्षिका रानी हैं न?'

अधारसिंह—'जी गरीबपरवर।'

अकबर सिर हिलाकर बोला, 'समझा। रानी को शायद

हुकूमत से अधिक प्रेम है वरना आपके धर्म में तो पति के मरने के बाद औरतें या तो सती हो जाती हैं या सब कुछ छोड़कर पूजा-पाठ करने लगती हैं। उन्हें दुनियाँ से लगाव नहीं रह जाता है।'

अधारसिंह—'लगाव तो उन्हें भी नहीं है जहाँपनाह ! वह सती हो रही थीं लेकिन मरते समय महाराज मना कर गये थे। उन्हें राजकुमार के पालन पोषण का भार सौंप गये थे।'

अकबर—'समझा। फिर तो मजबूरी थी। खैर अब उनकी इच्छा किस तरफ है? क्या अब भी वह राजकुमार की संरक्षिका बनी रहना चाहती हैं या दुनियाँ से अलग होकर खुदा को याद करती हुई जिन्दगी गुजारना चाहती हैं ?'

वृद्ध अधारसिंह मन ही मन अकबर की बातों पर मुस्कराये और बोले, 'उन्हें राजपाट से कोई प्रेम नहीं है जहाँपनाह ! वह तो जल्द से जल्द इस झंझट से छुटकारा लेना चाहती हैं। लेकिन अब परेशानी यह है कि उनकी प्रजा उन्हें छोड़ना नहीं चाहती। जो सुख महाराज दलपतिशाह के समय में नहीं मिला था वह रानी के समय में उन्हें मिल रहा है। तब भला ऐसी रानी को ·······।'

अकबर बीच में टोक पड़ा—'लेकिन यह सब करने वाले तो आप ही हैं न ? अगर रानी की जगह पर आप राजकुमार के संरक्षक बन जायँ तो क्या गोंडवाना की जनता इसे नापसन्द करेगी ?' इतनी देर बाद अकबर असली बात पर आया।

अधारसिंह—'जी हाँ । नापसन्द करेगी । रानी के रहते वह मुझे संरक्षक नहीं बना सकते।'

अकबर मुस्कराता हुआ सीधा बैठ गया, 'नहीं अधारसिंह जी, मैं आपकी इस बात से सहमत नहीं हूँ। यह कहना आपका ग़लत है। आप समझते नहीं हैं, आपके संरक्षक बनने से मेरी भी उलझन दूर हो जायेगी। मुझे गोंडवाना के संग-संग अपने मंत्रियों का भी तो ख्याल रखना है। उनकी बातों को बिल्कुल झूठ कहकर ठुकरा देना क्या उचित होगा ? मैं चाहता हूँ कि उनकी बात भी रह जाय और आपकी दोस्ती भी न टूटने पाये।'

अधारसिंह सब कुछ समझ गये थे परन्तु उन्हें तो समझ कर भी नासमझ बनने की आवश्यकता थी। वह इस समय दिल्ली में थे और सम्राट् अकबर के सामने थे। वह बोले, 'जहाँपनाह का कहना ठीक है। मंत्रियों की बातों का ख्याल रखना आवश्यक है। लेकिन गरीबपरवर को ज़रा फिर से सोचने की तकलीफ करनी होगी कि रानी के स्थान पर मेरा संरक्षक बनना कहाँ तक सही होगा। संसार और ईश्वर दोनों की दृष्टि में क्या मैं स्वार्थी और अपराधी नहीं समझा जाऊँगा ?'

अकबर हंसने लगा, 'कैसी बातें करते हैं अधारसिंहजी, अगर मन्शा ठीक है तो सब ठीक है। आप संरक्षक इसलिये थोड़े बन रहे हैं कि आप गोंडवाना राज्य को हड़पना चाहते हैं। आप तो जो कुछ कर रहे हैं हमारी दोस्ती और गोंडवाना की भलाई के लिये कर रहे हैं। आपके संरक्षक बनने से मैं भी अपने मंत्रियों के मुँह को बन्द करने में सफल हो सकूँगा, जो मेरे लिये ज़रूरी है।'

अधारसिंह ने आगे कुछ कहना बेकार समझा। उन्हें अकबर की नीयत का अनुमान लग गया था। वह समझ गये

थे कि अकबर कुछ गड़बड़ करना चाहता है। फिर भी उन्होंने चतुराई बरती और बोले,—'मैं जहाँपनाह से इस प्रश्न पर सोचने के लिये दो-चार दिनों की मोहलत चाहूँगा।'

अकबर—'बिल्कुल। आप अच्छी तरह सोच लें। ठीक है। अब आप जाइये।'

अधारसिंह उठकर सलाम करते हुये बाहर चले गये।

६

अधारसिंह ने अपने बाल धूप में सफेद नहीं किये थे। उन्होंने संसार को बहुत अच्छी तरह समझा था। जब वह गढ़-मण्ढल से चले थे तो उन्होंने दो विश्वासपात्र सैनिकों को भी साथ ले लिया था और उन्हें बतला दिया था कि दिल्ली पहुँचते वे उनसे अलग हो जायेंगे और अपने को दिल्ली निवासी बता कर समय-समय पर उनसे मिलने आते रहेंगे। साथ ही इधर उधर की बातों का भी पता लगा कर, उन्हें बताते रहेंगे। दिल्ली पहुँचकर इन सैनिकों ने ऐसा ही किया। मुसलमान होने के नाते इन्हें दिल्ली समाज में घुलते मिलते देर नहीं लगी थी। अधारसिंह ने इसी विचार से मुसलमान सैनिकों को ही साथ लाना ठीक समझा था।

सम्राट् अकबर से मिलकर अभी अभी अधारसिंह बैठे ही थे कि दोनों सैनिक आ पहुँचे। अधारसिंह ने बैठने का संकेत किया। दोनों बैठ गये। एक ने धीरे से पूछा, 'क्या बात-चीत हुई ?'

अधारसिंह ने थोड़े में निचोड़ सुनाते हुए आगे कहा, 'तुम्हें आज ही गढ़मण्डल को रवाना हो जाना है। अकबर की नीयत दूसरी मालूम पड़ रही है। वह गोंडवाना को हड़पना चाहता है। मैं रानीजी को पत्र लिखे देता हूँ। उन्हें लड़ाई की तैयारी आरम्भ कर देनी है।'

दोनों सैनिक अवाक् देखते रह गये। उनके मुँह से शब्द नहीं निकले। अधारसिंह ने पुनः कहा, 'घबड़ाने की कोई बात नहीं है। अगर गोंड अपनी बहादुरी में पीछे न हटे तो अकबर ऐसी मुँह की खायेगा कि जीवन भर न भूल सकेगा।'

सैनिक—'तो आप क्या यहीं......।'

अधारसिंह बीच में कह उठे, 'हाँ, अभी मुझे यहीं रहना पड़ेगा और बहुत सम्भव है कि दो चार वर्षों तक रहना पड़े। अगर अकबर की बात मैंने स्वीकार नहीं की तो वह मुझे क्यों छोड़ने लगा। खैर, यह सब भविष्य की बात है। जो सामने है, उसे देखो।' फिर उन्होंने दुर्गावती को विस्तार सहित पत्र लिखकर उसे दे दिया।

सैनिक ने पूछा, 'क्या मैं ख़त देकर वापस लौट सकता हूँ ?'

अधारसिंह—'नहीं। एक से काम चल जायेगा। अब जाओ। बहुत होशियारी से जाना। पत्र रानीजी के सिवा और के हाथ में नहीं पड़ना चाहिये।'

'जी' ! वह सलाम करता हुआ कमरे से बाहर हो गया।

उसके जाने के बाद अधारसिंह ने दूसरे सैनिक से कहा, 'तुम नरसों किले में दोपहर के बाद दीवानेआम के पास रहना। शायद तुम से कुछ कहना हो। ठीक है, जाओ। इधर यहाँ आने की आवश्यकता नहीं है।'

सैनिक—'बहुत अच्छा।' वह सलाम करता हुआ चला गया।

तीसरे दिन अधारसिंह ने सम्राट् अकबर से पुनः भेंट की।

अकबर बोला, 'क्या मैं उमीद करूँ कि अधारसिंह को मेरी दोस्ती नापसन्द नहीं आई ?'

अधारसिंह—'जहाँपनाह की दोस्ती किसे नापसन्द आयेगी लेकिन जहाँ तक संरक्षक बनने का सवाल है उसके लिये मैं जहाँपनाह से माफी चाहूँगा। सब तरफ से सोचने के बाद भी मेरी आत्मा तैयार नहीं हो रही है। इस बुढ़ापे में मैं अपना ईमान बिगाड़ना नहीं चाहता गरीबपरवर ! कुछ वहाँ भी तो जवाब देना होगा ?'

अकबर तो चाहता ही था कि अधारसिंह उसके प्रस्ताव को स्वीकार न करे और प्रस्ताव न स्वीकार करने का मतलब हुआ लड़ाई की घोषणा और फिर गोंडवाना को कुचलकर अपने अधिकार में कर लेना। अकबर मन ही मन मुस्कराया परन्तु ऊपर से तनिक गंभीर होकर बोला—'मैं नहीं समझता अधारसिंहजी कि इसमें आपका ईमान **किस** तरह बिगड़ रहा है। अगर बिगड़ भी रहा हो, तब भी मेरी दोस्ती से आप गोंडवाना के रहने वालों की भलाई ही कर सकते हैं। दूसरों की भलाई करने का मतलब हुआ खुदा की निगाहों में भला और प्यारा बनना। फिर आप ही सोचें कि मेरी दोस्ती अच्छी साबित होगी या दुश्मनी ?'

अधारसिंह भी मन ही मन प्रसन्न हुये। वह अकबर से कम चतुर नहीं थे। उसकी नीयत क्या है वह उसके मुँह से कहला लेना चाहते थे। उन्होंने कहा—'जहाँपनाह का कहना सत्य है। अगर मेरे संरक्षक न बनने से दुश्मनी हो सकती है, तो मैं उसे कभी पसन्द नहीं करूँगा। मुझे अब जहाँपनाह का

प्रस्ताव स्वीकार है। गोंडवाना के लिये मैं अपने को नरक में भी डाल सकता हूँ।'

अकबर चक्कर में पड़ गया। अधारसिंह नाहीं से इतनी जल्दी हाँ कर सकते हैं, उसे स्वप्न में भी आशा नहीं थी। फिर भी अकबर अपनी धूर्तता में बहुत आगे था। वह झट से बोल उठा, 'मैं बहुत खुश हुआ अधारसिंहजी! बहुत खुश हुआ। आपने मेरी बात मानकर मुझे धर्म संकट से बचा लिया। वरना मुझे अपने मंत्रियों के कहने के अनुसार गोंडवाना पर चढ़ाई करनी पड़ती।'

अधारसिंह सिर नवाये चुप रहे।

अकबर पुनः बोला, 'मैं आज ही कड़ा के सूबेदार आसफखाँ को लिखे देता हूँ कि वह मेरी तरफ से गोंडवाना की सरहद पर आपका स्वागत करे और अपनी देख-रेख में गोंडवाना में आपको राजकुमार का संरक्षक बनाकर कड़ा को लौट जाये।' अकबर की यह नई चाल थी। अकबर ने सोच लिया कि अधारसिंह उसे कभी स्वीकार नहीं कर सकते।

अधारसिंह—'इसकी कोई आवश्यकता नहीं है जहाँपनाह! मेरे संरक्षक बनने में किसी प्रकार की गड़बड़ी नहीं हो सकती। आप आसफखाँ को सूचना न दें।'

अकबर—'खैर, यह मुझे मालूम है कि आपके खिलाफ वहाँ कोई सिर उठाने वाला नहीं है लेकिन ऐसे मौके पर मेरी तरफ से किसी न किसी का होना बहुत ज़रूरी है।'

अधारसिंह—'जहाँपनाह सही फरमाते हैं लेकिन इस से गढ़मण्डल निवासियों पर बुरा प्रभाव पड़ेगा और शायद वह

मेरा विरोध भी करने लगें ।'

अकबर—'क्यों ?'

अधारसिंह—'इसलिए कि वे समझेंगे कि मैं जहाँपनाह से मिलकर गोंडवाना का स्वयं स्वामी बनना चाहता हूँ ।'

अकबर—'यह तो और भी अच्छा है अधारसिंहजी । सच पूछिये तो मेरा मन यही चाहता है । अगर आप उसे स्वीकार करलें तो फिर क्या कहना है ?'

अधारसिंह अकबर से जो कहलवाना चाहते थे, उसे उसने कह दिया । अकबर की बातों से साफ हो गया कि उसे दुर्गावती से भय है और वह किसी प्रकार उन्हें गोंडवाना से हटाना चाहता है। अधारसिंह बोले, 'मैं जहांपनाह की यह बात स्वीकार करने में असमर्थ हूँ। मैं गद्दारी नहीं कर सकता। जिसका नमक खाया है, उसे जीवन भर निभाऊँगा और बुजुर्ग के नाते जहाँपनाह को भी सलाह दूँगा कि संसार में कोई अमर होकर नहीं आया है। खुदा से सबको डरना चाहिये ।'

अकबर के चेहरे पर गंभीरता फैल गई और वह कुछ रूखे शब्दों में बोला, 'मैं अधारसिंह से सलाह लेने नहीं बैठा हूँ। मुझे नसीहत देने की ज़रूरत नहीं है । क्या सही है और क्या गलत, इसका मुझे बहुत अच्छा ज्ञान है । तो मैं कड़ा के सूबेदार को गोंडवाना पर चढ़ाई करने के लिये लिख दूँ ?'

अधारसिंह ने मुस्कराकर उत्तर दिया, 'जहाँपनाह की मर्ज़ी है। लिख सकते हैं। लेकिन लिखने के पहले एक बार फिर से सोच लेने की तकलीफ करलें। कहीं जहाँपनाह की सेनायें अपने मुँह पर कालिख पोत कर महाबली के नाम पर भी

धब्बा न लगा दें, यह डर है। रानी दुर्गावती की वीरता के सामने अभी तक कोई टिका नहीं है।'

अकबर खड़ा हो गया और बोला, 'ख़ैर बहुत जल्दी ही आपको सब कुछ मालूम हो जायेगा जब दुर्गावती जंज़ीरों में बंधी आपके सामने लाई जायेगी।' उसने ताली बजाई।

द्वारपाल अन्दर आया।

अकबर ने आदेश दिया, 'इन्हें कोतवाल के हवाले करो और कहो कि इन्हें किले में ही नज़रबन्द रखा जाय।'

'जी जहाँपनाह।' द्वारपाल अधारसिंह को साथ लेकर बाहर निकला।

अधारसिंह किले में नज़रबन्द हो गये। दूसरे दिन अकबर ने आसफखाँ को लिखा कि वह गढ़मण्डल पर चढ़ाई करके दुर्गावती को पकड़कर दिल्ली ले आये।

१०

रानी दुर्गावती को अधारसिंह का पत्र मिला। रानी ने कई बार पत्र पढ़ा और फिर घोर चिन्ता में डूब गईं। उनका सन्देह ठीक निकला। रात में उन्होंने भोजन भी थोड़ा किया। दिमाग नानाप्रकार की बातों में उलझा रहा। यद्यपि वह युद्ध से डरती नहीं थीं और न उन्हें अपने प्राण की ही चिन्ता थी पर अधार-सिंह का अभाव बहुत खल रहा था। ऐसे समय में उनके होने से काफी बल मिलता रहता। खैर, उन्हें अकबर के सामने घुटने तो टेकने नहीं थे। उन्हें अपनी आन की रक्षा के लिये सब कुछ न्यौछावर कर देना था। उन्हें अत्याचारी मुगलों को एक सीख देनी थी। उन्हें विश्वास था कि उनके सैनिकों की वीरता एक बार यमराज को भी दहला सकती थी, अकबर की क्या बिसात ?

दूसरे दिन रानी ने अपने सामन्त सरदारों और नगर के विशेष व्यक्तियों को बुलाकर अधारसिंह का पत्र दिखलाया और उनकी राय पूछी। सभी ने एक स्वर से अकबर को मुँहतोड़ जवाब देने की सलाह दी। रानी को प्रसन्नता हुई। उन्हें ऐसी ही आशा थी। सभा समाप्त होने पर रानी ने आदेश जारी किये। राज्य के अलग-अलग भागों के सरदारों को अपनी टुकड़ियों के साथ राजधानी में आने के लिये लिखा गया। तत्काल दुर्ग की मरम्मत में काम होने लगा। कारखानों में

हथियार बनने आरम्भ हुए। युद्ध की तैयारी शुरू हो गई।

नित्य सवेरे पूजा-पाठ करने के उपरान्त रानी घोड़े पर सवार हो जातीं और तीसरे पहर तक घूम-घाम कर सेना निरीक्षण और उसके संगठन पर ज़ोर दिया करतीं। मुगलों को पराजित करने का उनमें उत्साह भरा करतीं। सैनिक उसी उत्साह से उनकी बातों का समर्थन करते और जान रहते पीठ न दिखाने की बार-बार प्रतिज्ञा करते। वे अपनी रानी के लिये आसमान के तारे भी ला सकते थे, अकबर से लड़ना तो बहुत साधारण बात थी। सैनिकों की वफादारी और इस प्रकार के जोश को देखकर दुर्गावती की हिम्मत दुगुनी हो जाती और वह अधिक उत्साह से काम करने लगतीं। कभी-कभी वह राजधानी से बाहर निकल कर आस-पास के क्षेत्रों को देखतीं और अनुमान लगातीं कि कौन-सा स्थान युद्ध की दृष्टि से अच्छा और बुरा है। दिन पर दिन रानी का परिश्रम बढ़ता गया और वह खाना-सोना भूलकर न दिन को दिन और न रात को रात समझने लगीं। इन सब कार्यों में राजकुमार वीरनारायण भी घोड़े पर सवार माँ के संग-संग हाथ बटाया करते थे।

जिस राज्य के ऐसे राजकुमार और राजमाता होंगी उसकी प्रजा अपने स्वामी के लिये जो कुछ कर दे, कोई आश्चर्य नहीं। गोंडवाने के कोने-कोने से 'हर हर महादेव' की आवाज़ उठने लगी और बूढ़े, जवान सभी कमर कसकर लड़ाई के लिए तैयार हो उठे। उन्हें न तो घर की चिन्ता रही और न स्त्री-पुत्र की। उन्हें देश की चिन्ता थी, देश के सम्मान की चिन्ता थी और इनसे भी अधिक रानी दुर्गावती की आन की चिन्ता थी।

रानी की आन पर धब्बा न लगने पाये, इसके लिये वे ज़मीन आसमान के कुलाबे मिलाने को तैयार हो उठे थे।

उधर कड़ा के गर्वरनर आसफखाँ को अकबर का आदेश मिला। उसे प्रसन्नता हुई। यही वह चाहता था। उसे बड़ी तमन्ना थी कि दुर्गावती को पराजित करके देश के इस भाग में अपनी बहादुरी का झंडा गाड़ दे। उसने आदेश जारी किये। तैयारी आरम्भ हो गई। सेना इकट्ठी होने लगी। गोले बनने लगे। तोपों की संख्या बढ़ने लगी। आसफखाँ भयंकर तैयारी करने लगा। यद्यपि वह ऊपर से डींग अवश्य मारता था परन्तु अन्दर अन्दर समझता था कि दुर्गावती की वीरता का सामना करना सिंह के मुँह में हाथ डालना था और यही कारण था कि वह ऐसी तैयारी कर रहा था। हारकर लौटने पर उसकी बिना मौत के मौत थी।

पूरी तैयारी हो जाने पर 'अल्ला हो अकबर' के नारे लगाती हुई मुगल सेना गोंडवाना की ओर चल पड़ी। विशाल सेना से निकली हुई आवाज़; तुरही, ढोल, नगाड़ों की गड़गड़ाहट और हाथी के समान लुढ़कती हुई तोपों की घरघराहट ने आकाश को हिला दिया। वातावरण में कंपकंपी दौड़ गई। धूल से आसमान ढक गया। आसफखाँ गर्व से सीना ताने आगे आगे बढ़ने लगा।

मुगल सेना बढ़ती गई। मार्ग के गाँवों, कसबों, नगरों को आतंकित करती गई। गढ़मण्डल समीप आता गया। गोंडवाना की सीमा आ गई। आसफखाँ ने सीमा के भीतर प्रवेश किया। कोई विरोध नहीं था। विरोध क्या होता? रानी ने

पहले से ही गाँवों और कसबों को खाली करा दिया था। पेड़ों की पत्तियाँ कटवा दी थीं। तालाब और कुएँ सुखवा दिये थे। इतना ही नहीं घासों तक को जलवा कर राख करा दिया था। रानी की सूझबूझ बड़ी पैनी थी। वह आसफखाँ को बुरी तरह पछाड़ना चाहती थीं। आसफखाँ यह दृश्य देखकर दंग रह गया। वह समझ गया कि दुर्गावती ने भी लड़ाई की अच्छी तैयारी की है।

आसफखाँ बढ़ता गया परन्तु कुछ और आगे जाने पर उसे रुक जाना पड़ा। सूचना मिली कि रानी उधर मोर्चा लगाये खड़ी हैं। आसफखाँ ने भी मोर्चा लगाने का आदेश दिया। मोर्चा लगने लगा।

एक ओर सत्य का पल्ला पकड़े अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए एक बेकसूर औरत केवल बीस हज़ार सैनिक के साथ खड़ी थी तो दूसरी ओर अत्याचारी पुरुष पचास हज़ार की सेना लिये बिना किसी कारण उसे रौंदने आ डटा था। क्यों न डटता ? उसके पास शक्ति जो अधिक थी। वह कारण और अकारण का ध्यान क्यों करता ? उसे न तो किसी के कुछ कहने की चिन्ता थी और न उसे पुण्य-पाप का भय था। वह अपनी ताकत के नशे में चूर था।

रानी अपने सैनिकों को ललकारती हुई तीर की भाँति मुगल सेना को चीरती हुई अन्दर घुस गईं और लगी दुर्गा के समान राक्षसों का संहार रने । देखते-देखते हज़ारों सिर पृथ्वी पर लोटने लगे ।

११

दूसरे दिन रानी ने आसफखाँ के आक्रमण की प्रतीक्षा की परन्तु आसफखाँ ने आक्रमण नहीं किया। तीसरे दिन तड़के रानी ने आदेश दिया। तुरही बज उठी। सैनिक इसी की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे निकले। रानी सफेद घोड़े पर सफेद वस्त्र धारण किये आगे-आगे थीं। उन्होंने अपनी तलवार को ऊपर उठाकर चमकाते हुए कहा, 'हर हर महादेव।' पूरी सेना कह उठी, 'हर हर महादेव, हर हर महादेव, हर हर महादेव।' रानी ने रास झिटका। उनका घोड़ा उड़ चला। सैनिकों के भी घोड़े उड़ चले। और जिस प्रकार बाज झपटता है उसी प्रकार गोंड भी मुगल सेना पर टूट पड़े।

यद्यपि आसफखाँ भी सामना करने के लिए तैयार था, पर रानी के हमले में इतनी तेज़ी थी कि उसके सैनिक दहल उठे। वे जूझे अवश्य किन्तु उनका भयभीत मन उन्हें अधिक साथ नहीं दे रहा था।। वे गोंडों के सामने कमज़ोर पड़ते हुए दिखाई देने लगे थे। रानी का उत्साह बढ़ा। वह अपने सैनिकों को ललकारती हुई तीर की भाँति मुगल सेना को चीरती हुई अन्दर घुस गईं और लगीं दुर्गा के समान राक्षसों का संहार करने। देखते-देखते हज़ारों के सिर पृथ्वी पर लोटने लगे। खून की नदी बह उठी। मुगलों के बीच खलबली फैल गई। और सेना में खलबली फैलने से मतलब हुआ अपने को कमज़ोर समझ कर

भागने की तैयारी करना ।

आसफखाँ सब से पीछे हाथी पर खड़ा अपनी सेना की कायरता को देख रहा था। प्रथम झपेटे में ऐसी स्थिति हो जायगी, उसे आशा नहीं थी । पर अब हो क्या सकता था ? उसके पास ऐसी हिम्मत तो थी नहीं कि वह आगे आकर अपने सैनिकों को ललकारता। रानी के समीप आने पर प्राण जाने का भय था न । युद्ध चलता रहा । तलवारें टकराती रहीं । लाशें गिरती रहीं। पर दोनों पक्षों का यह टकराव बहुत समय तक नहीं बना रहा। मुगलों के पैर उखड़े और सेना में भगदड़ मच गई । आसफखाँ भी भाग चला और काफी पीछे हटकर सांस ली। सेना भी रुक गई ।

रानी हर्ष ध्वनि करती हुई लौट पड़ीं । गोंडों की प्रसन्नता का क्या कहना था । अपने से दुगुनी सेना को खदेड़ देना सरल काम नहीं था। रानी ने पूरी सेना को राजधानी लौट चलने का आदेश दिया । अब उन्होंने खुले मैदान में युद्ध न करके गढ़-मण्डल के घेरे के भीतर से लड़ने का निश्चय किया था। आसफखाँ की विशाल सेना को देखते हुए यही रास्ता उत्तम था। राजधानी में पहुँचते ही सैनिकों ने हर तरफ नाकेबन्दी कर ली और प्रथम विजय की मस्ती में झूमते हुए लगे रानी दुर्गावती की वीरता और साहस का बखान करने ।

उधर पराजित आसफखाँ अपनी लज्जा को छिपाने के लिए सेनानायकों और बड़े पदाधिकारियों को बुलाकर बड़ी देर तक डाँटता फटकारता रहा ।उनकी कायरता को धिक्कारता रहा। सब मौन बैठे सुनते रहे । अपने को कायर और दोषी स्वीकार

करते रहे। क्यों न करते ? वे नौकर जो ठहरे। उन्हें यह कहने का अधिकार तो था नहीं कि उनसे अधिक कायर और दोषी स्वयं सूबेदार साहब हैं। अन्त में आसफखाँ ने उन्हें हिदायत देते हुए सेना को फिर से संगठन करके लड़ाई की तैयारी करने के लिए कहा। सब सिर झुकाये उठकर चले गये।

उनके जाने के बाद पुनः आसफखाँ चिन्ता में डूब गया और बड़ी रात गये तक उसी प्रकार बैठा सोचता रहा। उसके दिमाग में एक चिन्ता मुख्य थी। अगर वह हार गया तो वह कहीं का न रह पायेगा। उसकी गवर्नरी छिन जाएगी। और वह सम्राट् अकबर की दृष्टि में सदा के लिए निकम्मा और कायर सिद्ध हो जायेगा। इसलिए उसे कोई ऐसा उपाय ढूंढ़ निकालना था जिससे साँप भी मर जाय और लाठी भी न टूटे। गोंडवाना पर अकबर का प्रभाव भी जम जाय और लड़ाई भी न हो। अन्त में उसे एक उपाय सूझ गया। उसने ताली बजाई। द्वारपाल अन्दर आया। उसने किसी को बुलाने को कहा। थोड़ी देर में एक सफेद दाढ़ी वाला व्यक्ति अन्दर आया। आसफखाँ ने बैठने को कहा और काफी देर तक बातें करता रहा।

दूसरे दिन वही दाढ़ी वाला मनुष्य हाथ में सफेद झंडा लिये गढ़मण्डल की ओर चल पड़ा। रानी के जासूसों ने पता लगा कर रानी को सूचना दी कि आसफखाँ का कोई दूत संधि-वार्ता के लिये आ रहा है। रानी मन ही मन प्रसन्न हुई और नगरप्रमुख को बुलाकर कहा कि वह स्वयं आगे जाकर सम्मान-पूर्वक दूत को लिवा लाये। नगरप्रमुख चला गया।

दूत रानी के सामने उपस्थित किया गया। रानी ने बैठने

का संकेत किया। उसने बैठते हुये कहा, 'मैं सूबेदार आसफखाँ-साहब का सन्देश लेकर आया हूँ।'

रानी सिर हिलाती हुई बोलीं, 'कहिये।'

दूत—'सूबेदारसाहब का प्रस्ताव है कि अगर आप राजकुमार को सम्राट् अकबर के पास दिल्ली भेज दें तो लड़ाई बन्द कर के सुलह की जा सकती है और इस तरह दुश्मनी की जगह पर दोस्ती का रिश्ता हो सकता है।'

रानी ने कहा, 'ठीक, और शासन-प्रबन्ध कौन यहाँ का देखेगा?'

दूत—'आप, और जब राजकुमार बालिग हो जायेंगे तब वह आकर खुद देखने लगेंगे।'

रानी हँस पड़ीं और बोलीं, 'आपके सूबेदारसाहब सोचने-समझने में कुछ कमज़ोर हैं। क्यों खाँसाहब, लड़ाई में पीठ मैंने दिखलाई है या आसफखाँ ने?'

बूढ़े खाँसाहब ने सिर नवा लिया और धीरे से बोले, 'आसफखाँ ने।'

रानी—'जीतने वाले हम हुए या आप?'

दूत—'आप।'

रानी—'तो फिर मैं अपने पुत्र को दिल्ली भेजूँगी या आसफखाँ या अकबर अपने पुत्र को मेरे पास भेजेंगे? आसफखाँ से जाकर कहिये, अगर कुशल चाहते हो तो शीघ्र किसी को मेरे हवाले करें वरना मैं दिल्ली को भी रौंद डालूँगी। गोंडवाना को छेड़कर उन्होंने बड़ा बुरा किया है। यहाँ वीर रहते हैं, कायर नहीं। क्या समझे?'

दूत ने सिर उठाकर रानी की ओर देखा और खड़ा हो गया। रानी ने रोब जमाने के लिये पुनः कहा, 'मुझे इसकी सूचना शीघ्र मिलनी चाहिए वरना मैं अधिक दिनों तक प्रतीक्षा नहीं कर सकती। आप आसफखाँ को समझा दीजियेगा। जाइए।'

दूत सलाम करता हुआ बाहर निकला। उसे गढ़मण्डल के बाहर तक पहुँचा दिया गया।

दूत ने पहुँचकर आसफखाँ से एक-एक बात बताई और अन्त में यह भी कह बैठा कि ऐसे अपमान भरे शब्दों को सुनने से अच्छा है लड़ाई के मैदान में लड़कर जानें दे देना।

आसफखाँ का मुँह उतर आया। उसका दुहरा अपमान हुआ था। उसे अपने पर क्रोध आने लगा कि उसने ऐसी कायरता क्यों दिखलाई? वह अगर दुर्गावती को हरा नहीं सकता है तो वीरों की भाँति लड़ते-लड़ते अपनी जान तो दे सकता है। मर्द होकर औरत के सामने झुकना चुल्लू भर पानी में डूब मरने के समान है। उसने गर्दन उठाई और उससे बोला, 'जैसा तुम कह रहे हो, अब वैसा ही होगा। अगर गढ़मण्डल को खाक में न मिला दिया तो मेरा नाम आसफखाँ नहीं। जाओ।'

वह सलाम करके चला गया।

उसके जाने के बाद आसफखाँ ने पुनः सारे नायकों और सरदारों को बुलवाया और दूसरे दिन तड़के ही भयंकर आक्रमण करने की योजना बनाने लगा। उसकी राय थी कि पहले तोपों से गोलाबारी हो और इतनी हो कि सारा नगर जल उठे। उसके बाद सिपाही धावा बोलें और बात की बात में किला फतह करलें। सबने आसफखाँ की राय का समर्थन किया और

उचित बतलाया। बात तय हो गई। आसफखाँ ने कामों का बंटवारा किया और उन्हें उसी समय से जुट जाने के लिए आदेश दिया। सब चले गए। आसफखाँ भी रावटी से निकला और घोड़े पर सवार होकर सेना में चक्कर लगाने लगा। कल के युद्ध के लिए उत्साह भरने लगा।

रात बीत चुकी थी किन्तु आसफखाँ अब भी चक्कर लगा रहा था। एक घंटा उसने और लगाया, तब वह अपनी रावटी को लौटा। अभी आकर बैठा ही था कि द्वारपाल ने आकर सूचना दी, 'गरीबपरवर से कोई गढ़मण्डल का आदमी मिलना चाहता है।'

आसफखाँ ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा, 'गढ़मण्डल का ?'

'जी गरीबपरवर।'

'भेजो।'

द्वारपाल बाहर चला गया।

मनुष्य अन्दर आया। आसफखाँ उसे ध्यान से देखता हुआ बोला, 'बैठिये, गढ़मण्डल से आ रहे हैं ?

मनुष्य—'जी। मैं दुर्गावती के सरदारों में से एक सरदार हूँ और इसके प्रमाण में मेरा यह चिन्ह है।' उसने मिरजई के अन्दर से एक सुनहला पदक निकाल कर दिखलाया।

आसफखाँ ने गर्दन हिलाते हुए स्वीकार किया और पूछा, 'आपका इस वक्त कैसे आना हुआ ?'

सरदार—'मैं आपकी सहायता करके दुर्गावती से बदला चुकाना चाहता हूँ क्योंकि उसने मेरे बड़े भाई को मरवा डाला है।'

आसफखाँ—'क्यों ?'

सरदार—'इसलिए कि उन्होंने एक नीच जाति के मनुष्य का, जिसकी कोई हस्ती नहीं थी, क्रोध में आकर कत्ल कर दिया था, जब कि मेरे बाप-दादों ने इस राज्य को अपने खून से सींच-सींच कर इसकी नींव को दृढ़ बनाया है। यह बात दुर्गावती को मालूम भी है। फिर भी बिना ध्यान दिये हुए यह कह कर कि मौत की सज़ा मौत होती है—उसने मेरे भाई का सिर कटवा दिया है।'

आसफखाँ ने मुँह बनाया और बनावटी दु:ख दिखलाता हुआ बोला, 'ओफ। बड़ी नमकहराम औरत है। जिस राज्य को बनाने में आप लोगों ने खून पसीना एक कर दिया हो, तब ऐसा बर्ताव ? अगर आपके भाई ने किसी ऐरे-गैरे का कत्ल कर ही दिया, तो क्या हुआ ? उस आदमी का महत्त्व ही क्या था ?' आसफखाँ मन ही मन प्रसन्न हो उठा था।

'यही चीज़ मैंने और दूसरे लोगों ने भी दुर्गावती को समझाई थी। पर उसने एक न सुनी और जो करना था कर दिया। मैं खून का घूँट पीकर रह गया और अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। भगवान की कृपा से अब अवसर आ गया है। अब आप बतायें कि मैं किस प्रकार से आपकी सहायता करूँ जिससे आप दुर्गावती को पराजित कर सकें ? क्योंकि लड़ाई की हालत देखते हुए आपके सैनिक उसके सैनिकों से कमज़ोर और डरपोक नज़र आ रहे हैं।'

आसफखाँ ने जानबूझकर उसकी हाँ में हाँ मिलाई, 'आप का अन्दाज़ सही है। ऐसा हो सकता है लेकिन रही बात आपकी

मदद की, इसे मैं क्या बता सकता हूँ। यह तो आपके सोचने की चीज़ है। हाँ, इतना मैं अपनी ओर से ज़रूर कह सकता हूँ कि अगर आप ने मेरी मदद की तो गोंडवाना की सूबेदारी पुरस्कार के रूप में आपको भेंट की जायेगी।'

सरदार—'खैर, यह तो बाद की बात है। जब मैं आपके लिये कुछ करूँगा तो आप भी मेरे लिये कुछ कीजियेगा।'

आसफखाँ—'बिल्कुल। इसमें क्या शक है?' फिर उसने सरदार की सच्चाई परखने के विचार से पूछा, 'इस समय दुर्गावती के पास कितनी सेना है?'

सरदार—'लगभग बीस हज़ार और हाथी एक हज़ार।' फिर उसने सेना सम्बन्धी बहुत-सी बातें बताईं जो बताने योग्य नहीं थीं। उसने रानी के संग विश्वासघात किया और देश के संग गद्दारी।

आसफखाँ सब सुनता रहा और अन्दर ही अन्दर खुशी में फूलता रहा। उसे सरदार के ऊपर विश्वास हो गया। सब कुछ सुन लेने पर उसने कहा, 'कल सवेरे हमारा हमला होगा। हो सके तो सिपाहियों को भी भड़काने की कोशिश कीजिये।'

सरदार—'अच्छी बात है। कोशिश करूँगा। अब मैं चलूँ?'

आसफखाँ—'रुकिये।' उसने द्वारपाल को बुलाकर अशर्फियों की थैलियाँ लाने को कहा। द्वारपाल ले आया। आसफखाँ ने उन्हें सरदार को दे देने के लिये कहा।

सरदार—'यह क्या?'

आसफखाँ—'सिपाहियों को फोड़ने के लिये।'

सरदार मुस्कराया और थैलियाँ सँभालता हुआ बाहर निकला। उसके जाने के बाद आसफखाँ मारे प्रसन्नता के नाच उठा। आज जैसी खुशी उसने पहले कभी नहीं अनुभव की थी।

१२

दूसरे दिन आसफखाँ की तोपें भयंकर गर्जना के साथ आग उगलती हुई गढ़मण्डल की ओर बढ़ चलीं। उधर रानी भी तैयार खड़ी थीं। उन्होंने भी अपने सैनिकों को आदेश दिया। इस बार वह हाथी पर सवार होकर सेना का संचालन कर रही थीं। वीर गोंडों ने गोलियाँ चलानी आरम्भ कर दीं परन्तु गोलों का मुकाबिला गोलियों से कब तक किया जा सकता था। आसफखाँ की बड़ी-बड़ी तोपें आग बरसाकर गोंडों को भुनने लगीं। सैनिक ढेर होने लगे। रानी सेना की यह दशा देखकर घबड़ा उठीं। उन्होंने सोचा की अगर कुछ समय तक यही हालत रही तो उनकी सेना या तो जलकर राख हो जायगी या भाग खड़ी होगी। रानी बड़ी चिन्ता में पड़ गईं क्योंकि उनके पास और कोई उपाय नहीं था जिससे ईंट का जवाब पत्थर से दिया जा सकता हो।

इसी प्रकार कुछ देर और युद्ध चलता रहा। मुगलों का ज़ोर बढ़ता गया। गोंड दबने लगे। वे कर भी क्या सकते थे ? केवल मरना ही उनके बस की बात थी सो वे कर ही रहे थे। रानी ने समझ लिया कि अब हार निश्चित है इसलिये उन्होंने अपने हाथी को आगे बढ़ाया और सैनिकों को ललकारते हुये चिल्लाकर कहा, 'बहादुरो, पराधीन होकर जीवित रहने से मर जाना उत्तम है। अगर अपनी रानी और देश की शान रखनी

है तो अपने शरीर से तोपों के मुँह भर दो। तोपचियों को काट डालो। मौत एक बार आती है, बार-बार नहीं। लड़ाई के मैदान में मरने वाले स्वर्ग को प्राप्त होते हैं। बढ़ो आगे।

रानी के इन शब्दों ने जादू का काम किया। सैनिकों का गिरता हुआ उत्साह जाग उठा। खून की गर्मी बढ़ गई। उन्होंने 'हर हर महादेव' के नारे लगाये और अपनी तलवारों को भाँजते हुये झपट पड़े। तोपों से निकलते हुये गोलों ने सैकड़ों की लाशों को चिथड़े-चिथड़े कर दिया परन्तु प्राण देने वाले प्राण लेने वालों से अधिक शक्तिशाली होते हैं। अन्त में गोंड तोपों के पास पहुँच ही तो गये। उन्होंने तोपचियों के सिर उड़ा दिये और तोपों के मुँह फेर दिये। फिर क्या था, मियाँ की जूती मियाँ के सिर पर बजने लगी ।मुगलों में हाहाकर मच गया । आसफखाँ ने ललकारा और सेना को संभालने का प्रयत्न किया परन्तु जो सेना आग से खेल सकती है, तोपों के मुँह में घुसने का साहस कर सकती है, उसके सामने कौन टिक सकता था? पुन: आसफखाँ की सेना में भगदड़ मच गई। सिपाही अपनी-अपनी जान लेकर भाग चले।

गोंड खदेड़ रहे थे और मुगल भाग रहे थे। आसफखाँ अलग भाग रहा था। 'हर हर महादेव' के नारे लग रहे थे। रानी दुर्गावती की जय-जयकार हो रही थी। जो विजय का स्वप्न देख रहे थे, इस समय काला मुँह करके भागे जारहे थे। अंधेरा हो चला था। इसीलिये रानी ने सैनिकों को आगे बढ़ने से रोका और लौटने का आदेश दिया। सेना लौट पड़ी।

गढ़मण्डल नारों और जय-जयकारों से गूंज उठा। लोग

उछल रहे थे। नाच नाच कर अपनी खुशी को बतला रहे थे। सम्राट् अकबर की सेना को पराजित करना आसान काम नहीं था। सारा नगर आनन्द में डूब गया था। बड़ा अनोखा वातावरण फैल गया था। इसी समय रानी ने तुरन्त अपने खास-खास सरदारों की बैठक की और कहा—'मेरी राय है कि चुने हुये सैनिकों को लेकर पुनः मुगलों पर धावा बोल दिया जाय।

एक सरदार ने पूछा, 'अभी ?'

रानी—'अभी नहीं, आधी रात होने पर। ऐसा करने से बची हुई मुगलों की हिम्मत भी समाप्त हो जायेगी। उनके पास दुबारा आक्रमण करने की शक्ति नहीं रह जायेगी। लूट का सामान मिलेगा सो अलग।'

जो सरदार आसफखाँ से मिलने गया था वह बोला, 'शक्ति तो उनके पास वैसे भी नहीं रह गई है, रानीजी। अब वे आक्रमण क्या करेंगे? वे तो मुँह काला करके भाग गये।'

रानी—'ठीक है। आपकी बात को मैं काटती नहीं हूँ पर जब अवसर मिला है तो उससे लाभ क्यों न उठाया जाय ? सन्देह क्यों रखा जाय ? दुश्मन को पूर्णरूप से क्यों न रौंद डाला जाय जिससे वह फिर न उठ सके ?'

वही सरदार—'हाँ, यह भी आपका कहना उचित है और अगर आदेश होगा तो हम इसका पालन भी करेंगे लेकिन यह तो निश्चित है ही कि अगर वे आक्रमण करने की सोचें तो कल-परसों तक तो किसी हालत में कर ही नहीं सकते हैं। जब दिल्ली से और सेना आयेगी तब शायद हिम्मत बाँध सकें तो बाँध सकें। इसलिए मैं चाहता था कि आज जैसी शुभ और महान रात को

हँसी-खुशी और उत्सव में बिताया जाय तो उत्तम है। सैनिकों की भी यही इच्छा है।'

जिस जानमारी और खून की नदी बहाने के बाद विजय मिली थी उसे अनुभव करते हुए सभी सरदार मन ही मन चाह रहे थे कि आज की रात विश्राम और उत्सव में काटी जाय पर रानी का प्रस्ताव सुनकर वे चुप हो गये थे। किन्तु जब एक ने विनती की तो दूसरे और तीसरे को भी विनती करने का साहस हुआ। उन्होंने भी कहा पर उन्हें यह अन्दाज़ तो था नहीं कि उनके बीच कोई देशद्रोही भी है। रानी को सरदारों की बात मानने के लिए विवश हो जाना पड़ा। उनके पास और कोई चारा नहीं था। ज़बर्दस्ती करने का अवसर नहीं था। उन्होंने उनकी बात मान ली। सरदार हर्ष-ध्वनि करते हुए कमरे के बाहर हो गये और अपनी-अपनी मंडली में मस्ती लेने लगे।

देशद्रोही सरदार अपने काम में सफल हुआ। वह बाहर निकला और सबकी आँखें बचाकर घोड़ा उड़ाता हुआ उड़ चला आसफखाँ की सेना की ओर। जब वहाँ पहुँचा तो आसफखाँ अकेला बैठा चिन्ता में डूब रहा था। उसकी यह दूसरी हार थी और ऐसी बुरी हार थी कि वह मुँह दिखाने योग्य नहीं रह गया था। वह बोला, 'सरदारसाहब, मैं बहुत लज्जित हूँ। आप-जैसा सहायक मिलने पर भी मैं दुर्गावती को हरा न सका। मैं नहीं·····।'

सरदार बीच में बोल उठा, 'मेरे पास समय बहुत कम है। मुझे तुरन्त लौटना है। अभी काम आपका बन सकता है।

तनिक हिम्मत करने की बात है ।'

जैसे डूबते को तिनके का सहारा मिल गया हो । आसफखाँ ने आश्चर्य से पूछा, 'काम बन सकता है ? कैसें ?'

सरदार ने बताया, 'इस समय सारा गढ़मण्डल विजय उत्सव मना रहा है और रात भर मनाता रहेगा । आप अपनी सेना इकट्ठी कीजिये और जब सारी राजधानी सोती हो, आक्रमण कर दीजिए । आप की जीत निश्चय होगी । बड़ी कठिनाई से यह सब कर सका हूँ । यह अवसर हाथ से निकल गया तो फिर कुछ न हो सकेगा ।' वह उठ खड़ा हुआ ।

आसफखाँ—'आप जा रहे हैं ?'

सरदार—'हाँ ।'

आसफखाँ उसे कुछ दूर तक छोड़ने आया और कल निश्चित रूप से आक्रमण करने को कहा । सरदार ने घोड़े पर चढ़ते हुये उससे विदा ली ।

रानी समझ गईं कि उनका समय पूरा हो गया है पर जीते जी उनके शरीर को मुगल छूने न पायें इस विचार से उन्होंने पास खड़े एक सैनिक की कटार लेकर अपनी छाती में भोंक ली ।

१३

आसफखाँ का आक्रमण हो गया। गढ़मण्डल में खलबली मच फैल गई। रानी ने सिर पीट लिया। वह रुआँसी हो आई। उनके सारे परिश्रम पर पानी फिर गया। उनके सपनों वाला महल ढह गया। पर अब अफसोस करने से क्या लाभ था ? जब तक साँस है तब तक आस है। लड़ना तो हर हालत में था। वह हथियार बाँधकर बाहर निकलीं। सेना को सचेत किया। पर इतनी हड़बड़ी में क्या हो सकता था ? जैसे तैसे सैनिक तैयार होकर निकले। रानी ने सेना को दो भागों में बाँटा। एक भाग उन्होंने अपने आधीन रखा और दूसरा राजकुमार वीरनारायण के।

मुगल सेना बढ़ती चली आ रही थी। उनके बढ़ने में वेग था। रानी ने अपनी सेना को ललकारा। दोनों सेनाएँ गुथ गईं। सैनिकों के सिर कट कट कर गिरने लगे। थोड़े समय तक बड़ा भयंकर युद्ध हुआ पर धीरे-धीरे गोंड कमज़ोर पड़ने लगे। इसी बीच किसी ने वीरनारायण पर प्रहार किया और वह घोड़े से गिर पड़े। चोट अधिक आई थी। रानी ने दूर से अपने पुत्र को गिरते हुए देखा। वह घोड़ा दौड़ाती हुई उनके समीप आईं। उनकी आँखें भर आई थीं। आत्मा कराह उठी थी। उन्होंने झटपट वीरनारायण को उठवाया और कुछ खास सैनिकों की देख-रेख में पीछे ले जाने को कहा। पुत्र ने माँ को

ढाढ़स बंधाया और उन्हें लड़ाई की ओर अधिक ध्यान देने को कहा। सैनिक राजकुमार को लेकर चल दिये।

जिस पुत्र के लिये माँ ने अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया हो अगर उसी पुत्र की यह दशा हो गई हो तो उस मां का सुध-बुध खो जाना स्वाभाविक था। रानी दुर्गावती भी सुध-बुध खो बैठी थीं। वह लड़ना भूल गई थीं। वह बार-बार गर्दन मोड़कर जाते हुए अपने पुत्र को देख रही थीं। उनकी इस असावधानी का परिणाम यह निकला कि एक सनसनाता हुआ तीर उनकी आँख को बेध गया। आँख निकल आई। उन्होंने झट से साफा खोलकर बाँधा और आगे बढ़ी ही थीं कि तब तक दूसरा तीर आकर लगा। उन्होंने लगाम रोक ली। वह समझ गईं कि उनका समय पूरा हो गया है। पर जीते जी उनके शरीर को मुगल न छूने पायें इस विचार से उन्होंने पास खड़े एक सैनिक की कटार लेकर अपनी छाती में भोंक ली।

जब उनका शरीर घोड़े से गिर रहा था तो उनके हिलते हुये होंठ टूटे-फूटे शब्दों में कह रहे थे, 'नाथ···मैं···तुम्हारे···पास ···अपने···कर्त्तव्यों···को···पूरा···कर···के···आ···।' प्राण पखेरु उड़ गये। जीवन ज्योति बुझ गई।

गद्दार अपनी गद्दारी में सफल हो गया। आसफखाँ विजयी हुआ लेकिन कब, जब रानी दुर्गावती की मृत्यु हो चुकी थी।

●

हमारे नवीन प्रकाशन

तारों से पूछिये	:	उमाशंकर ५.५०
झरोखे	:	श्रीराम शर्मा 'राम' ५.००
सभ्यता की ओर	:	गुरुदत्त ३.००

सभी पुस्तकों की सामग्री स्वच्छ, छपाई सुन्दर और आवरण पृष्ठ बहुरंगे हैं।

उमेश प्रकाशन

किशोरों के लिए उपन्यास

गढ़मण्डल की वीरांगना रानी दुर्गावती के जीवन से सम्बन्धित यह किशोर उपन्यास पाठकों में मनोरंजन के साथ-साथ राष्ट्रीय चेतना भी पैदा करेगा ।